 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

कार्तिक-मार्गशीर्ष, संवत् नानकशाही ५४३
वर्ष ५ अंक ३ नवंबर 2011

संपादक : सिमरजीत सिंह *एम. ए, एम. एस. सी.*
सहायक संपादक :
सुरिंदर सिंघ निमाणा *एम. ए (हिंदी, पंजाबी, अंग्रेजी), बी. एड.*
जगजीत सिंघ *एम. एस. सी.*

चंदा	
सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60, फैक्स: 0183-2553919



एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार २
संपादकीय ३
श्री गुरु नानक देव जी का समाज-संकल्प ६
-डॉ. विश्वनाथ तिवारी
श्री गुरु नानक देव जी १०
-डॉ. सुखविंदर कौर
हउमै को दूर करना होगा (कविता) १२
-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'
श्री गुरु नानक देव जी की शैक्षणिक देन १३
-डॉ. अमृत कौर
श्री गुरु नानक साहिब जी की बाणी में . . . १९
-डॉ. अविनाश शर्मा
श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बलिदान . . . २१
-डॉ. महीप सिंघ
. . . श्री गुरु तेग बहादर साहिब २६
-डॉ. मधुबाला
श्री गुरु तेग बहादर साहिब (कविता) २८
-श्री संजय वाजपेयी रोहितास
नवम गुरु जी की निर्भयता पर आधारित . . . २९
-डॉ. निर्मल कौशिक
हिंद की चादर : श्री गुरु तेग बहादर साहिब ३३
-स. गुरप्रीत सिंघ
गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ३६
-डॉ. कुलदीप सिंघ हउरा
शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के चुनाव . . . ४०
-डॉ. देविंदर सिंघ विद्यार्थी
शराब बड़ी खराब (कविता) ४५
-श्री प्रशांत अग्रवाल
सिक्ख नसलकुशी : नवंबर १९८४ ४६
-स. सुरजीत सिंघ
श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आगमन . . . ४९
-डॉ. प्रदीप शर्मा स्नेही
गुरबाणी-संपादन तथा अध्ययन : स्रोत सूचना ५१
-डॉ. गुरमेल सिंघ
अवसर न चूको! ५२
-बीबी जसप्रीत कौर 'रावी'
गुरसिक्खी बारीक है-८ ५३
-डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ
गुरबाणी चिंतनधारा : ५३
-डॉ. मनजीत कौर
दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि : ४६ ६१
-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'
कन्या भ्रूण-हत्या (कविता) ६२
-डॉ. (सुश्री) लीला मोदी
खबरनामा ६३

गुरबाणी विचार

घर की नारि तिआगै अंधा ॥ पर नारी सिउ घालै धंधा ॥
जैसे सिंबलु देखि सूआ बिगसाना ॥ अंत की बार मूआ लपटाना ॥१॥
पापी का घरु अगने माहि ॥ जलत रहै मिटवै कब नाहि ॥१॥रहाउ॥
हरि की भगति न देखै जाइ ॥ मारगु छोडि अमारगि पाइ ॥
मूलहु भूला आवै जाइ ॥ अंम्रितु डारि लादि बिखु खाइ ॥२॥
जिउ बेस्वा के परै अखारा ॥ कापरु पहिरि करहि सींगारा ॥
पूरे ताल निहाले सास ॥ वा के गले जम का है फास ॥३॥
जा के मसतकि लिखिओ करमा ॥ सो भजि परि है गुर की सरना ॥
कहत नामदेउ इहु बीचारु ॥ इन बिधि संतहु उतरहु पारि ॥४॥२॥८॥ *(पन्ना ११६४)*

भक्त नामदेव जी राग भैरउ में उच्चारण किये हुए इस पावन शबद द्वारा निज-स्त्री से हट कर पर-स्त्री पर बुरी दृष्टि वाली पुरुष प्रवृत्ति का विरोध करते हुए मनुष्य-मात्र को इस अनैतिक, समाज-विरोधी तथा मानवता-विरोधी प्रवृत्ति से बचते हुए रूहानी पथ-प्रदर्शक सच्चे गुरु की शरण में आकर साफ-स्वच्छ जीवन-यापन का गुरमति अथवा भक्ति-मार्ग दर्शाते हैं।

भक्त नामदेव जी कठोर व स्पष्ट शैली में फरमान करते हैं कि देखो भाई! भटके हुए पुरुष का कैसा अशोभनीय चलन है कि वह अपनी घरवाली का तो परित्याग कर देता है परंतु दूसरे की नारी के साथ अवैध संबंध बनाता है। उसका यह कुकर्म उस तोते की भांति है जो सेमल वृक्ष को देखकर खुश होता है। जैसे तोता सेमल वृक्ष देखकर खुश होता है मगर उसे सेमल से कुछ हासिल नहीं होता, उसी प्रकार कुकर्मग्रस्त मनुष्य इस कुकर्म में उलझकर मर जाता है। पापी का घर अग्नि में होता है अर्थात् वह अपनी काम-ज्वाला में जल रहा होता है। अंत में वह खत्म हो जाता है।

जहां प्रभु की भक्ति होती है, काम में लिप्त मनुष्य वहां नहीं जाता। वह सही रास्ता छोड़ देता है और भटकना में पड़ जाता है, चूंकि वह अपनी वास्तविकता को भूल जाता है, इसलिए वह आता और जाता है अथवा आवागमन तथा फजूल के चक्रों में फंसता है। वह प्रभु-नाम रूपी अमृत व्यर्थ में बहा देता है और विष खाता है।

वेश्या अपना अखाड़ा लगाती है, सुंदर वस्त्र पहनती तथा शृंगार करती है, वह अपनी ओर से पूरी तरह सुर के साथ ताल मिलाने का प्रयास करती है। इस विकारी जीवन के कारण उसके गले में भी यमों का फंदा पड़ जाता है।

जिसके माथे पर अच्छा कर्म लिखा है वह सच्चे गुरु की शरण में पड़ता है। भक्त नामदेव जी कथन करते हैं कि वे इस बात को अच्छी तरह विचार करके स्पष्ट कहते हैं कि यही ढंग, ऐ भले पुरुषो, दूसरे किनारे पर पहुंचने अथवा रूहानी मंजिल को प्राप्त करने का है।



नवंबर १९८४ के सिक्ख कत्लेआम को 'सिक्ख नसलकुशी' के परिप्रेक्ष्य में समझने की जरूरत

सत्य का मार्ग अत्यंत कठिनाइयों से भरा हुआ होता है। सत्य-मार्ग के पथिकों के पांवों में तीखे कांटे चुभते हैं जो उनको दुखी भी करते हैं, परंतु कठिनाइयों से सत्य के पथिक कभी घबराते नहीं बल्कि वे सत्य के मार्ग पर चलना जारी रखते हैं। सिक्ख धर्म संसार का नया, विलक्षण, वैज्ञानिक तथा आधुनिकतम धर्म है जो कि शुद्ध रूप से सत्य पर आधारित है। इस सत्य-धर्म के संस्थापक गुरु नानक पातशाह ने बड़ी एवं गहरी कठिनाइयां सहन् करके, गहरी कमाइयां करके इसको संसार के उस क्षेत्र में स्थापित करने का कारनामा कर दिखाया जिसमें विदेशी मूल के शासकों-प्रशासकों ने जुल्म को अंतिम व ऊंचे शिखर तक पहुंचाया हुआ था। नये बाहरी आक्रमणकारी भी प्रजा पर जुल्म कर रहे थे और कूड़ प्रधान हो चुका था। कूड़ की प्रधानगी को तोड़ने तथा सत्य-धर्म की स्थापना करने के लिए गुरु जी ने 'सिक्ख धर्म' की नींव रखी। गुरु नानक पातशाह के सिक्खों ने उनके द्वारा दर्शाए पद्-चिन्हों पर चल कर सत्य-धर्म का प्रभुत्व स्थापित करने में सफलता पाई।

सिक्ख मिसलों और महाराजा रणजीत सिंघ के अधीन देशवासियों ने हजारों वर्षों के पश्चात आजाद फिजा में सुख की सांस ली। सच और झूठ के बीच टकराव सदैव चलता रहता है। झूठ फिर भारी पड़ गया और वह भी राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात के काल में। दुख तथा खेद के साथ यह लिखना पड़ रहा है कि अंग्रेजों की तरफ से बदनीतियों तथा धोखे-फरेब के द्वारा छीने गए सिक्ख राज्य (स्टेट) को उस समय के सिक्ख नेताओं ने न लेकर और भारत के साथ अपनी तकदीर जोड़कर शायद यह सोचा हो कि बहुसंख्यक सत्ताधारक कौम उनके साथ अन्याय नहीं करेगी, परंतु अन्याय का अनचाहा घटनाक्रम स्वतंत्रा-प्राप्ति के बाद जल्दी ही घटित होना आरंभ हो गया था। जो बहुसंख्यक कौमी आगुओं ने सिक्खों को इस देश में आजादी से रहने देने के बड़े-बड़े वादे किये थे, वे सत्ताधारक होकर आंखें फेर गए। जब सिक्खों ने अपने साथ हो रहे भेदभाव और इसके साथ-साथ सिक्ख-बहुसंख्यक प्रांत पंजाब के छीने गए अधिकारों की पुनर्स्थाप्ति के लिए जेलें भर दीं तो सत्ताधारकों ने उनको कौमी स्तर पर खत्म करने के मंद इरादे धार लिये। सन् १९८४ इन बुरे इरादों को अमल में लाने के लिए चुना गया। यह वो वर्ष है जब देश की वफादार तथा बहादुर, देश-कौम के लिए आगे होकर बड़ी कुर्बानियां करने वाली सिक्ख कौम पर दो बड़े आक्रमण किए गए। पहला आक्रमण जून १९८४ वाला है जिसमें श्री अकाल तख्त साहिब, श्री हरिमंदर साहिब, तथा अन्य बहुत-से गुरुद्वारा साहिबान पर भारत सरकार ने फौजी हमला कर सिक्ख कौम का भारी मात्रा में जानी-माली नुकसान किया। दूसरा आक्रमण नवंबर १९८४ के नाम से आज भी सिक्खों के दिलों में नासूर बनकर चुभ रहा है, जिसमें निहत्थे एवं निर्दोष सिक्खों को उनकी नसलकुशी करने का निशाना बनाकर

मौत के घाट उतार दिया गया। यह वो समय था जब सिक्खों पर समय की सरकार द्वारा नियोजित दुखों का पहाड़ टूट पड़ा था।

घल्लूघारे तो सिक्ख कौम के साथ अट्ठारहवीं सदी में भी बरताये गए। एक घल्लूघारा काहनूवान के छंभ में १७४६ ई में सिक्ख कौम के साथ वक्त की मुगल हकूमत के हिंदू अहलकार लखपत राय ने सिक्ख जवांमर्दी तथा उनकी अद्वितीय बहादुरी से चिढ़ कर और सिक्खों के साथ लड़ाई में मारे गए अपने भाई जसपत राय की मृत्यु का बदला लेने के लिए बरताया था। यह एक ऐतिहासिक सच्चाई है। लखपत राय को सिक्ख नसलकुशी के लिए अनुकूल दंड उसके जीवन-काल में ही देकर दिलेर सिक्खों ने उसको उसकी बज्र गलती का एहसास अवश्य करा दिया था। ये बख्शिशें गुरु के योद्धा सिक्ख शूरवीरों को गुरु-दात के रूप में भरपूर रूप में मिली हुई हैं।

दूसरा आक्रमण १७६२ ई को मलेरकोटला के नजदीक स्थित गांव कुप्परुहीड़ा में घटित करने वाला अफगान जुल्मी अहमदशाह अब्दाली था जिसको अपने जब्र पर बहुत घमंड था। गुरु साहिब के नाम-लेवा योद्धा सिक्ख शूरवीरों ने उसके नापाक पंजे में से देश की इज्जत की प्रतीक २००० हिंदू युवा लड़कियों तथा स्त्रियों को छुड़ा कर उनको घर-घर पहुंचाने का फर्ज अदा किया था, जिससे वह आक्रमणकारी चिढ़ गया था। यह विश्व-इतिहास में विलक्षण प्रकार का बहादुरी तथा परोपकार वाला कारनामा है।

परंतु हमारे सत्ताधारक बहुत जल्दी बदल गए। वे बहुसंख्यक और शासक कौम बन कर अपनी सदियों की कमजोर पृष्ठभूमि भूल गए। उन्होंने सिक्खों सहित देश की सभी अल्पसंख्यक कौमों को अपमानित करने और उनको अपना बनाकर रखने के मंद इरादे धार लिये। जून, १९८४ और नवंबर, १९८४ के आक्रमण हमारे सत्ताधारकों की इस बुरी मानसिकता में से ही उपजे हैं। ये दोनों 'सिक्ख नसलकुशियां' ही तो हैं। पचास वर्ष की आयु तक पहुंचे पाठकों को, जो कि सन् १९८४ के वर्ष में जवानी की शिखर पर थे, यह स्मरण होगा कि कैसे एक-दो दिन पहले तत्कालीन प्रधानमंत्री का यह बयान प्रकाशित हुआ था कि श्री दरबार साहिब कांप्लेक्स में पुलिस दाखिल नहीं होगी, परंतु यह स्मरण हो कि दाखिल होने वाली देश की सेना थी, जिसको आजाद भारत में सिक्ख नसलकुशी के लिए प्रयोग किया गया। यह बात अलग है कि बहादुर तथा दिलेर कौम होने के नाते गुरु के नाम-लेवा जुझारू सिंघों ने कुछ दिन तक बड़ी हिम्मत के साथ इन आक्रमणों का सामना किया। पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी का शहीदी दिवस मनाने आई हजारों निर्दोष संगत को निशाना बनाया गया। श्री अकाल तख्त साहिब की पावन इमारत को टैंकों तथा तोपों के गोलों के साथ तहस-नहस कर दिया गया। ३७ अन्य गुरुधामों पर भी सैनिक एक्शन किया गया।

नवंबर, १९८४ की सिक्ख नसलकुशी बेहद शर्मनाक कारनामा है। तत्कालीन सरकार की मर्जी और कुछ छुपे तथा कुछ जाहिर हुक्मों पर भाड़े के कातिलों को आग लगाने वाला पाऊडर, पेट्रोल, डीजल, मिट्टी का तेल, लोहे की राडें आदि सप्लाई करके देश की राजधानी दिल्ली में सिक्खों को उनके घरों में से निकाल कर अत्यंत निर्दयता के साथ और अपमानित करते हुए मारा गया। माताओं के पुत्र, बहनों के भाई और पत्नियों के सिरों के साईं उनकी आंखों के सामने

खत्म किये गए, जीवित जलाये गये। कुछेक स्थानों पर सिक्खों ने अपने पवित्र गुरुधामों की रक्षा के लिए अवश्य कृपाणें खींचीं। यह बात उजले दिन की भांति साफ तथा स्पष्ट है कि ये दंगे-फसाद बिलकुल नहीं थे जैसे कि प्रचार किया गया है। अब हमारे नेताओं और लेखकों में भी सुचेतनता आई है तथा वे इसको के सही शब्दी अर्थों में 'सिक्ख नसलकुशी' कहने-लिखने की तरफ लौटे हैं जो कि अत्यधिक अनिवार्य है। सिक्ख नसलकुशी के बारे में तब से ही निष्पक्ष न्यूज एजेंसियां जांच-खोज का कार्य करती आ रही हैं जिससे रौंगटे खड़े करने वाले तथ्य जाहिर हो रहे हैं। जून, १९८४ के आक्रमण पर तो समय-समय पंजाबी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में कई पुस्तकें आई हैं परंतु नवंबर, १९८४ की सिक्ख नसलकुशी के संबंध में खोज-कार्य तथा सर्वेक्षण-कार्य तुलनात्मक रूप में काफी कम हुआ है जो कि होना चाहिए था। अभी भी यदि संकल्प सहित उद्यम तथा प्रयत्न किये जाएं तो यह बहुत ही आवश्यक होने योग्य कार्य होना चाहिए। कुछेक उद्यमी बंधुजन इस क्षेत्र में लगे हुए हैं। सिक्ख नसलकुशी के परिवारों में से कुछ बहुत कठिनाइयों से जिंदा बचे शख्स भी इस संबंध में अपनी रौंगटे खड़े करने वाली आप-बीती घटनाएं हमको भेजते आ रहे हैं जो कि प्राप्त होने की सूरत में हर वर्ष नवंबर के महीने 'गुरमति प्रकाश' पंजाबी-मासिक में प्रकाशित की जा रही हैं। ऐसे कार्य के लिए समूह लेखक भाइयों तथा बहनों को पुरजोर अपील है कि वे नवंबर, १९८४ की अत्यंत दुखदायी नसलकुशी का इतिहास, जितना भी किसी से हो सके, विभिन्न स्रोत ढूंढते हुए कलमबद्ध करने का अवश्य उद्यम करें। नवंबर, १९८४ की सिक्ख नसलकुशी के साथ संबंधित जितने केस दिल्ली तथा अन्य नगरों में दर्ज कराये गए, वे भी अधिकतर जान-बूझ कर लटकाये गए हैं। उस समय के कुछ सत्ताधारक नेताओं के नाम उजले दिन की भांति स्पष्ट बोल रहे हैं परंतु हमारी केंद्रीय सरकारों ने यह ठाना हुआ लगता है कि किसी भी दोषी को दंड नहीं मिलने देना। यह लोकतंत्र कहलवाने वाले देश की बहुसंख्यक सत्ताधारक पार्टियों की बेशर्मी की अंतिम सीमा है जिन्होंने अपने लिए अलग कानूनी व्यवस्था बना रखी है तथा देश के अल्पसंख्यक लोगों के लिए अलग। उनको यह अवश्य स्मरण रखना चाहिए कि वक्त सदैव बदलता रहता है।

सिक्ख नसलकुशी के दुखांत को सहन करके, इसमें से गुजर कर सिक्ख कौम के एक हिस्से के मनोबल में थोड़ा अंतर अवश्य पड़ा है परंतु गुरु के नाम-लेवा सिक्ख अभी भी उस अकाल पुरख वाहिगुरु पर विश्वास रखते हुए न्याय की आशा एवं उम्मीद करना नहीं भूलते क्योंकि गुरु के नाम-लेवा सिक्खों और साहिब-ए-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज के साजे-निवाजे खालसा पंथ को हर हाल में चढ़दी कला में रहने का स्वभाव तथा वीर-रसी किरदार प्राप्त है। आज भी हमारा इस लोक-कहावत में विश्वास बना हुआ है कि "रब के घर देर है, अंधेर नहीं।"

आओ! *"कूड़ निखुटे नानका ओड़कि सचि रही"* के गुरु-फरमान को सामने रखते हुए सिक्ख-पंथ तथा खालसा पंथ को चढ़दी कला में ले जाने के लिए प्रत्येक संभव प्रयत्न करते रहें। ऐसे प्रयत्नों में ही कौम एक दिन अवश्य नवंबर, १९८४ की सिक्ख नसलकुशी के सदमे में से निकल कर अपना उज्जवल भविष्य यकीनी बनाने की ओर साबित कदमों के साथ चलने लगेगी।



श्री गुरु नानक देव जी का समाज-संकल्प

-डॉ. विश्वनाथ तिवारी

श्री गुरु नानक देव जी के समाज-संकल्प के बारे में चर्चा करने से पहले उनके समय (१४६९-१५३९ ई) के दौरान भारत की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा सभ्याचारक दशा का ज्ञान होना आवश्यक है। उस समय राजनैतिक तौर पर शांति एवं स्थिरता नहीं थी, मुगलों की हकूमत थी। हकूमत और ताकत के नशे के कारण जहां एक ओर मुगलों में गिरावट दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही थी, वहां दूसरी ओर हिंदुओं में राजसी गुलामी के कारण कमजोरी प्रत्यक्ष नजर आ रही थी। नौकरी, पदोन्नति तथा नजराने राजनैतिक कृपा पर मिलते थे न कि योग्यता, गुण, कौशलता के कारण। धर्म बदलने वालों तथा धर्म बदलाने वालों को सुविधाएं एवं जागीरें मिलती थीं। मुसलमानों के मुकाबले हिंदुओं को टैक्स ज्यादा देने पड़ते थे तथा सुविधाएं कम मिलती थीं। जन्म ही तकदीर थी। कहां, किसके, किसका जन्म हुआ है, उस पर उनका जीवन निर्भर करता था। खेतीबाड़ी प्रमुख आर्थिक साधन था। कई निखट्टू आदमी काम करने वालों के सिर पर दिन-ब-दिन अमीर होते जा रहे थे तथा कई लोगों को तो पेट भरने के लिए रोटी भी नसीब नहीं हो रही थी। हर कोई किस्मत के सहारे पर था। कोई अपनी किस्मत पर ईर्ष्या कर रहा था और कोई कुढ़ रहा था। कर्मों का फल समझ कर सभी अपना-अपना जीवन भोग रहे थे। वहमों-भ्रमों, जादू-टोनों पर लोगों का विश्वास था। जीवन में 'भेख' पर जोर था। औरत एक ओर घर की चारदीवारी में बंद पड़ी कठिन सांस ले रही थी, दूसरी ओर बादशाह तथा उसके दरबारियों एवं चहेतों के लिए अय्याशी का खिलौना भी समझी जाती थी। कई लोग अल्लाह के नाम को बेच रहे थे, कई लोग परमात्मा के पास दिन बदलने तथा हालात बदलने के लिए मिन्नतें कर रहे थे। समाज में संतुलन नहीं था। एक तरफ ताकत का नशा था तथा दूसरी तरफ सचमुच ही गिरावट थी। ऐसा था चौगिर्दा, जिसमें गुरु नानक साहिब की शख्सियत बनी, फूली, फली तथा उभरी।

समाज की सही हालत को जानने के लिए गुरु जी ने बहुत लंबा समय हिंदुस्तान तथा पड़ोसी देशों की यात्रा की। उनका ज्ञान केवल सुनी-सुनाई बातों या पढ़ी हुई पुस्तकों पर आधारित नहीं था, बल्कि उस पर निजी अनुभव की गहरी छाप थी। गुरु साहिब का यह सफर सैलानियों वाला अर्थात् जगह देखने वाला नहीं था, बल्कि जहां एक ओर वे लोगों की हालत जानकर नब्ज पहचानना चाहते थे वहां लोगों के आगुओं के साथ विचार-चर्चा कर, समाज-परिवर्तन का यत्न कर रहे थे। ये प्रचार यात्राएं गुरु जी को अनगिनत लोगों के संपर्क में लाईं, उनकी हालत को जानने का अवसर दिया तथा असल दुख को जानकर, कारणों को ढूंढने व दूर करने के लिए प्रेरणा दी।

समाज साहित्यकार पर प्रभाव डालता भी है और इसके साथ-साथ उसके प्रभाव को कबूलता भी है। जहां बादशाह, वजीर, जरनैल

या अफसर हुक्म द्वारा समाज में परिवर्तन की सामर्थ्य रखते हैं, परिवर्तन लाते हैं, तकदीर बना या बिगाड़ सकते हैं, वहीं साहित्यकार अपने शब्दों के द्वारा एक ओर समाज की बीमारियों का चित्रण करते हैं तथा दूसरी ओर चिंतन के जरिए कारण ढूंढ कर उसे दूर करने के संकेत भी अपनी रचनाओं में दिया करते हैं। गुरु नानक साहिब उन साहित्यकारों में से थे जिन्होंने समाज की राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा सभ्याचारक दशा पर टीका-टिप्पणी की। यह टीका-टिप्पणी, तनज, चोट कोई व्यर्थ की टीका-टिप्पणी नहीं थी, बल्कि यह समाज की अगुआई का स्रोत बनी। गुरु जी के उपदेश भी सतही उपदेश नहीं थे बल्कि जीवन के रक्त-मांस से सने हुए थे।

लेखक अपनी कृति से ही समाज को नहीं बदलता बल्कि जीवन में घटित दुर्घटनाओं, घटनाओं तथा ज्वलंत जीवन में से निकलते अंगारों के साथ उसका संघर्ष समाज में क्रांति का कारण भी बना करता था। गुरु साहिब के जीवन की कुछ साखियां--'सच्चा सौदा', 'सूरज को पानी न देना', 'मक्के की तरफ पैर पसारना', 'भागो के घर की नहीं बल्कि लालो के घर रोटी खानी', 'भाई मरदाना जी को साथ रखना' एवं 'करतारपुर में खेती करनी', धार्मिक, आर्थिक तथा सामाजिक सार्थकता रखती हैं। ये साखियां केवल उनके जीवन से ही विशेष संबंध नहीं रखतीं बल्कि उस समय के तथा आने वाले समय के लोगों के लिए उत्साहवर्धक, प्रेरणादायक तथा मार्गदर्शक हैं।

आधुनिक युग में सामाजिक क्रांति के लिए व्यक्तिगत यत्न ज्यादा महत्व नहीं रखते। युग को बदलने के लिए सांझे यत्न जत्थेबंदी एवं राजनैतिक सत्ता की जरूरत समझी जाती है, किंतु मध्यकालीन युग में जो समाज में क्रांति लाने की सामर्थ्य रखता था वो केवल महान आत्मा वाले श्री गुरु नानक देव जी ही हो सकते थे, जिनके विचार पलटते-पलटते दसवें पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के हाथों में जत्थेबंदी का रूप धारण कर गये, जिनका प्रभाव आज केवल पंजाब या भारत में ही नहीं, दुनिया के बहुत-से देशों में है।

हाकिम के हुक्म को मानते तो बहुत लोग हैं किंतु उसको चुनौती कोई विरला ही दे सकता है। गुरु साहिब ने अपने समय के हाकिमों का केवल हुक्म-उल्लंघन ही नहीं बल्कि विरोध भी किया है। उनके शब्दों में उस समय के हाकिम इंसान नहीं थे तथा न ही राज्य-प्रबंध करने वाले मनुष्य :

राजे सीह मुकदम कुते ॥ (पन्ना १२८८)

कितनी दिलेरी चाहिए समय की ताकत तथा उसके असर को सही शब्दों में बताने के लिए! ऐसे हाकिमों के राज्य प्रबंध में लोगों की हालत क्या हो सकती है, उसको भी गुरु साहिब ने बड़ी जुर्रत से बयान किया है। जुल्म करने वाले जालिमों तथा जाबिरों का गुरु जी ने अपनी बाणी में खंडन किया है :

खुरासान खसमाना कीआ हिंदुसतानु डराइआ ॥
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ ॥ (पन्ना ३६०)

स्पष्ट है कि गुरु साहिब की सहानुभूति मजलूमों के साथ है। गुरु जी द्वारा जुल्म के विरोध में आवाज उठाना, जुल्म को नंगा करना, जुल्म को जुल्म कहने की जुर्रत करना अपने आप में बगावत का आरंभ है जो समय पाकर प्रवान चढ़ी। उनके विचार के अनुसार लड़ाई भी बलवान की बलवान के साथ होनी चाहिए, कमजोर एवं निर्बल लोगों के साथ लड़ाई

निंदनीय है। उनके समय जो अफरा-तफरी मची थी। जो जुल्म लोगों पर हो रहे थे, उनको देखकर श्री गुरु नानक देव जी का मन तड़प उठा। यह पीड़ा इतनी बढ़ी कि उन्होंने ईश्वर को भी ताना मारा :

एती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ ॥
(पन्ना ३६०)

गुरु जी के अनुसार राजाओं तथा राज-प्रबंधकों को जनता की भलाई के लिए सोचना तथा काम करना चाहिये इसलिए कि लोग आगे बढ़ सकें, शांति से रह सकें। अगर राजा ऐसा करें तो वे वास्तव में जनता के दिल पर राज्य कर सकते हैं।

आर्थिक पहलू की तरफ भी श्री गुरु नानक देव जी ने अपने जीवन तथा बाणी में ध्यान दिया है। मलिक भागो तथा भाई लालो जी की साखी से स्पष्ट है कि वे अमीरों के हक में नहीं थे, क्योंकि उनके विचार के अनुसार न केवल हाकिम ही आम लोगों का रक्त चूस रहे थे बल्कि अमीर भी गरीबों की मेहनत पर पल कर उनको भूख से मरने पर मजबूर कर रहे थे। पराई कमाई का खंडन गुरु जी की बाणी में मिलता है, जैसे कि :

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
(पन्ना १४१)

हाथों से काम करने को गुरु साहिब ने विशेष रूप से बल दिया है। मेहनत और हक की कमाई की उन्होंने बहुत प्रशंसा की है। आज संसार में आदर्श समाजवाद का नारा दिन-प्रतिदिन ऊंचा हो रहा है जिसके अनुसार पूंजी लोगों के सांझे भले के लिए खर्च होनी चाहिए। गुरु साहिब कुछ व्यक्तियों के हाथों में पूंजी होने के विरोध में थे। वे न केवल राजनैतिक इंसाफ के हक में थे बल्कि आर्थिक समानता भी उनका निशाना कही जा सकती है। 'वंड छकना' इसी सिद्धांत की पुष्टि करता है। गुरु साहिब के जीवन तथा रचित बाणी से यही निष्कर्ष निकलता है कि वे राजनैतिक एवं आर्थिक शोषण के विरुद्ध थे। जहां उन्होंने जनता को हाथों से किरत करने के लिए प्रेरित किया वहीं अमीर द्वारा ताकत के जोर पर अवैध कमाये धन तथा जागीरदारी-प्रथा का भी निषेध किया। उन्होंने हक की दौलत पर जीवन बिताने का आदेश दिया।

धार्मिक क्षेत्र में वे दैवी शक्ति में विश्वास रखने वाले थे, किंतु गुरु जी का धर्म इंसान-और इंसान में धर्म के नाम पर भेदभाव उत्पन्न नहीं करता था।

जन्म से ही नहीं बल्कि मनुष्य के कर्म से उसके धर्म का पता चलना चाहिए। इसलाम और हिंदू धर्म में बढ़ रहे भेष की उन्होंने डट कर विरोधता की तथा लोगों को 'सच्चा धर्म' सिखाया; अन्य धर्मों के लिए सत्कार एवं बर्दाश्त की भावना पैदा की। उनके अनुसार धर्म मनुष्य को अच्छा बनने के लिए, गुणों के धारक होने के लिए प्रेरित करता है। गुरु जी के ये विचार जन-साधारण में अच्छा परिवर्तन लाने लगे।

सामाजिक रूप से गुरु साहिब ने उस समय के लोगों में फैल रही गलत रस्मों का खंडन किया; पाखंडों, करामातों, अंधविश्वासों का उन्होंने अपने जीवन तथा बाणी में खंडन किया। इस संबंध में न उन्होंने हिंदुओं की रियायत की और न ही मुसलमानों की। जहां, जब तथा जिसमें जो भी बुराई नजर आई उसे दूर करने की कोशिश की। स्त्री समाज का अभिन्न अंग है। गुरु साहिब के समय योगी स्त्री को समाधि में रुकावट डालने वाली समझते थे,

घर-बार छोड़ कर जंगलों में चले जाते थे। वे लोग औरत की निंदा करते तथा उसे बुरा-भला कहते न थकते। स्त्री उस समय आर्थिक रूप से आजाद नहीं थी। राजनैतिक रूप से भी उसे कोई विशेष हक प्राप्त नहीं थे। धार्मिक जीवन के लिए वह रुकावट समझी जाती थी तथा सामाजिक क्षेत्र में उसकी अति बुरी दशा थी। गुरु जी से मर्द की यह ज्यादती बर्दाश्त नहीं हुई और वे कह उठे :

भंडि जंमीऐ भंडि निंमीऐ भंडि मंगणु वीआहु ॥
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥
भंडु मुआ भंडु भालीऐ भंडि होवै बंधानु ॥
सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥
(पन्ना ४७३)

उन्होंने न केवल जादू-टोनों, करामातों, हठों, वहमों, सूतक आदि की विरोधता की बल्कि 'जनेव' कैसा होना चाहिए, नमाज कौन-सी अच्छी होती है आदि प्रश्न उठाकर अच्छे गुणों को धारण करने पर भी जोर दिया तथा अमल का उपदेश दिया। इसी तरह उन्होंने निम्न वचन कहकर अपने आप को आम लोगों का मित्र तथा साथी बताया :

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ (पन्ना १५)

निष्कर्ष यह निकलता है कि गुरु नानक साहिब सामाजिक बेइंसाफी की उसी प्रकार विरोधता करते थे जिस प्रकार राजनैतिक जुल्म, आर्थिक शोषण तथा धार्मिक कट्टरता की। उन्होंने हर जीव को खुद को सुधारने के लिए प्रेरणा दी तथा गुणों के धारक होने का उपदेश दिया। आप जी का फरमान है :

विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ (पन्ना ४)

इसी तरह वे व्यक्ति-सुधार के पक्ष में थे तथा इस विचार के थे कि अगर इंसान गुणवान हो, ईमानदार हो, किरत करने वाला हो, बांट कर खाने वाला हो, जुल्म एवं जब्र के विरुद्ध आवाज उठाने वाला हो तो चौगिर्दा भी अच्छा हो सकता है। हकीकत भी यही है कि मनुष्य को कोई कानून उतना नहीं सुधार सकता जितना मनुष्य खुद ही अपने आप को सुधार सकता है। अगर हर एक मनुष्य यह ठान ले तो मनुष्यों का समूह अच्छा, सुंदर, हरा-भरा और खिला-खिला होगा, जिसमें राजनैतिक जुल्म तथा जब्र नहीं होगा, आर्थिक असमानता नहीं होगी, सामाजिक समानता तथा धार्मिक संतोष होगा एवं भेष का नहीं बल्कि गुणों का राज्य होगा। ऐसा था गुरु नानक साहिब का संकल्प, जिसके लिए उन्होंने लोक-भाषा को चुना, चोट तथा उपदेश के माध्यम का प्रयोग किया, जीवन एवं बाणी द्वारा व्यवहारिक जीवन पर जोर दिया, ताकि मनुष्य सही राह पर चल सके।

अनुरोध

'गुरमति ज्ञान' सिक्ख इतिहास तथा गुरबाणी में दर्ज शिक्षाओं द्वारा मानव समाज का मार्गदर्शन करती धार्मिक पत्रिका है। गुरबाणी के सम्मान को मुख्य रखते हुए 'गुरमति ज्ञान' के पाठक साहिबान से अनुरोध है कि वे 'गुरमति ज्ञान' को पढ़ने के बाद इसे न तो रद्दी में बेचें तथा न ही ऐसी जगह पर रखें जहां इसकी उचित संभाल न हो सके। पत्रिका को यदि घर में संभालकर रखने की उचित व्यवस्था न हो तो पढ़ने के बाद इसे किसी मित्र, रिश्तेदार आदि को दे दें अथवा किसी गुरुद्वारा साहिबान या पुस्तकालय में पहुंचा दें। -संपादक।

श्री गुरु नानक देव जी

-डॉ. सुखविंदर कौर*

आज से लगभग पांच सौ बत्तीस वर्ष पूर्व जब श्री गुरु नानक देव जी का जन्म हुआ तब भारत अनेक प्रकार के कुसंस्कारों से ग्रस्त था। तत्कालीन समाज की राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक दशा बहुत शोचनीय थी। उस समय के राजा शोषक का रूप धारण कर चुके थे। समाज अनेक जातियों, संप्रदायों और धर्मों में विभाजित हो चुका था। धार्मिक तौर पर पाखंडों, अंधविश्वासों तथा कर्मकांडों का बोलबाला था। ऊंच-नीच और छुआ-छूत का जहर भारतीय लोगों की नस-नस में फैल चुका था तथा राजाओं की लूटमार से जनता कराह रही थी। ऐसे समय में लोगों की पुकार सुनकर परमात्मा ने दुनिया का सुधार करने के लिए श्री गुरु नानक देव जी को इस संसार में भेजा जिस पर भाई गुरदास जी लिखते हैं :

सुणी पुकारि दातार प्रभु
गुरु नानक जग माहि पठाइआ। (वार १:२३)

ऐसी महान विभूति, पंजाब के भक्ति आंदोलन के प्रवर्त्तक तथा पतनोन्मुखी तत्कालीन समाज के पथ-प्रदर्शक श्री गुरु नानक देव जी का जन्म जिला शेखूपुरा के तलवंडी (अब पाकिस्तान) गांव में सन् १४६९ ई में हुआ। तलवंडी गांव अब ननकाणा साहिब के नाम से प्रसिद्ध है। प्रकृति से भ्रमणशील, कर्म से शील, चतुर्दिक ज्ञान के भंडार, उदात्त भावनाओं के सागर, आध्यात्मिक पथ के अविचलित पथिक गुरु नानक साहिब महान व्यक्तित्व लेकर संसार में आए। आपके पिता का नाम श्री महिता कालू जी व माता का नाम माता त्रिपता जी था। आपकी बहन बेबे नानकी जी महान व्यक्तित्व वाली थीं।

आप बचपन से ही आध्यात्मिक विचारों के थे। आपका बचपन हरियाली से घिरी हुई तलवंडी में बीता। सात वर्ष की आयु में आपको गांव की पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजा गया। आपने अपने आध्यात्मिक विचारों से अपने अध्यापकों को भी प्रभावित किया। आधुनिक इतिहासकारों के अनुसार आपको एक मौलवी सैयद हुसैन और एक पंडित बृजनाथ ने आपको भाषाओं का अक्षर-ज्ञान दिया। आपने छोटी आयु में ही पंजाबी, फ़ारसी, हिंदी, संस्कृत का ज्ञान प्राप्त कर लिया। यह शिक्षा आपके लिए अल्प थी, इसलिए और ज्ञान के लिए आपने अनुभवी साधुओं से मेल-मिलाप बढ़ाया, ताकि मन की पिपासा शांत हो सके। श्री महिता कालू जी ने आपको दुनियावी तौर पर जीविकोपार्जन के कार्यों, जैसे कृषि-कार्य, व्यापार आदि में लगाने का यत्न किया, परंतु आप इन कार्यों में प्रवृत्त न होकर लोगों की सेवा में लीन रहे। इसी काल में आपने भूखे साधुओं को २० रुपए से लंगर छकाकर सच्ची सेवा व सच्चा सौदा किया। इसी समय में भाई मरदाना जी (रबाबी) से आपका स्नेह पैदा हुआ जो सदा आपके साथ रहे। आपकी शादी माता सुलक्खणी जी से हुई। आपके घर दो पुत्रों ने जन्म लिया। एक का नाम (बाबा) सिरीचंद व दूसरे का नाम (बाबा) लखमीचंद रखा गया। आपने कुछ समय तक

*हिंदी विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो : ९८१४९-६९२२६

सुलतानपुर में शाही मोदीखाने में नौकरी भी की।

उस समय सुलतानपुर सूबे की राजधानी होने के कारण धार्मिक व सांस्कृतिक सरगर्मियों का केंद्र था। यहां रहकर आपको हकूमत की ज्यादती तथा तत्कालीन समाज के धार्मिक आडंबरों, कर्मकांडों, अंधविश्वासों आदि की गहरी जानकारी प्राप्त हुई। आपने लोगों को मात्र बाहरी दृष्टि से धार्मिक लगने वाले बनावटी जीवन को नजदीक से देखा। इन सब चीजों को देखकर आप बहुत दुखी हुए। एक सुबह आप वेईं नदी में स्नान करने गए। इस घटना को इतिहास में 'वेईं प्रवेश' के नाम से जाना जाता है। वहां आप तीन दिन तक आलोप रहे। तीन दिन बाद प्रकट होकर आपने यह नारा दिया, "न कोई हिंदू न मुसलमान।" इसके साथ ही आप संसार के उद्धार के लिए प्रचार-यात्राओं पर चल पड़े। भाई गुरदास जी आपके इस फैसले के लिए इस प्रकार लिखते हैं:

चढ़िआ सोधणि धरति लुकाई ॥ (वार १:२४)

आप जी ने पूर्व, पश्चिम, उत्तर तथा दक्षिण दिशाओं में चार प्रचार-यात्राएं (उदासियां) कीं। इन यात्राओं में आपने क्रमश: आसाम, मक्का, मदीना, लंका तथा ताशकंद तक की यात्रा की। इसी समय के दौरान आपने करतारपुर नगर बसाया। यात्राओं के दौरान ही आपने कई स्थानों पर उचित उपदेश द्वारा भटके हुए जनमानस को सुरुचिपूर्ण मार्ग दर्शाया। कशमीर विद्वानों का गढ़ माना जाता था। आपने वहां के पंडितों से विचार-विमर्श कर उनके कई तरह के भ्रम तोड़े। हिमालय पर योगियों के केंद्र थे। आपने उनको सही 'धर्म' सिखाया तथा योगी-सिधों को जन-सेवा का उपदेश दिया। प्रचार-यात्राओं के समय आपका अनेक पीरों-फकीरों, सूफी-संतों के साथ तर्क-वितर्क भी हुआ। मौलवी व मुसलमानों को आपने सही रास्ता दिखाया। इसलामी देशों में यात्राओं द्वारा आपने 'सांझे' धर्म की शिक्षा दी। लगभग बाईस वर्ष आप घूम-फिर कर धर्म का प्रचार करते रहे। आपने अपने जीवन के अंतिम वर्ष करतारपुर में गृहस्थ जीवन में रहते हुए, खेतीबाड़ी करने के साथ-साथ धार्मिक उपदेश देते हुए व्यतीत किये।

श्री गुरु नानक देव जी ने बहुत सहज व सरल भाषा में लोगों को प्रभावित किया। अपनी सहजता से ही आपने कुतर्कों को काटा। यह बहुत टेढ़ा कार्य था। सहज धर्म की व्याख्या उन्होंने सहजता से ही की। कहीं भी पांडित्य का प्रदर्शन नहीं किया :

सभ महि जोति जोति है सोइ ॥
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥
(पन्ना १३)

श्री गुरु नानक देव जी ने तत्कालीन धार्मिक आडंबरों तथा संकीर्णताओं को दूर करने के लिए लोगों के सामने वास्तविकता (सत्य) को प्रस्तुत कर दिया, जिससे संकीर्ण विचार और आडंबर अपने आप ही ढीले पड़ गए।

गुरु नानक साहिब एक महान शायर तथा संगीताचार्य भी थे। आपकी बाणी धार्मिक ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज १९ रागों में उच्चरित ९७३ पद और सलोक गुरु नानक साहिब द्वारा रचित हैं। इनमें विभिन्न विषयों की चर्चा है। मुख्यत: गुरु जी द्वारा सृष्टि, जीव और प्रभु के संबंध, अकाल पुरख का रूप और स्थान, माया का बंधन काटने की प्रेरणा, निर्विकार एवं शुद्ध मन से प्रभु का नाम जपने का प्रोत्साहन आदि विषय लिए गये हैं। गुरु नानक साहिब ने जपु जी साहिब बाणी का उच्चारण किया, जो आज सिक्ख-सिद्धांतों का सार कही जा सकती है।

इसके अतिरिक्त आपकी अन्य बाणियों में आसा की वार, सिध गोसटि, पटी, दखणी ओअंकार, पहरे, तिथी, बारह माहा, सुचजी, कुचजी, आरती आदि प्रसिद्ध बाणियां हैं। इनके अतिरिक्त गुरु नानक साहिब की अन्य बाणी सलोक, पद, असटपदी, सोहले, छंद आदि रूप में भी है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में प्रत्येक बाणीकार की अपनी अलग शैली है, परंतु गुरु नानक साहिब की बाणी शैली पक्ष से बिलकुल अद्‌भुत विशेषताएं लिए हुए है। गुरु नानक साहिब की बाणी की प्रत्येक पंक्ति में से उनका संपूर्ण व्यक्तित्व झलकता है, जो उनकी शैली को बिलकुल अनूठी बना देता है। अपने समय के कर्मकांडों, बहुदेवोपासना को देखते हुए आपने एक परमेश्वर की पूजा करने का उपदेश दिया।

अंत में कहा जा सकता है कि विश्व को एक नवीन दृष्टिकोण, जो सांसारिक संकीर्णताओं और पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष एवं नफरत से अछूता था, देने के कारण गुरु नानक साहिब विश्व-विख्यात समाज-सुधारक कहलाए। गुरु नानक साहिब का प्रेम, समानता, सरलता आदि का उपदेश ही उस एक बड़े धर्म का बीज बना जो आगे चलकर 'सिक्ख धर्म' और बाद में 'खालसा पंथ' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। 

कविता

हउमै को दूर करना होगा

प्यार परम-पिता का पाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
परमात्मा को पास बुलाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
सपने जैसा है यह संसार, जो आंखों को दिखाई देता है,
सपने में से बाहर आना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
उड़ती है यहां अहं की धूल और धुआं घृणा का छाया है,
यदि यह प्रदूषण मिटाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
अपने मन की कोठरी में भर लिया, अंधेरा दुनिया-भर का,
दिव्य-प्रकाश का दर्शन पाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के विकार छीने शांति सच्ची,
सुख-शांति में जीवन बिताना है तो, इन सबको दूर करना होगा!
अनगिनत हैं यहां 'गुरु' नकली, मोह-माया के जाल में फंसे हुए,
सच्चे का सच्चा मार्ग दिखाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
तमाम उम्र गुज़र गई माया इकट्‌ठी करते हुए, क्या मिला?
उसकी नदरि-मेहर को पाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
झूठे रिश्ते-नाते निभाते हुए, हाथ रह जाते हमारे खाली,
सच्ची दरगहि में जगह पाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
कैसे पहचान पाओगे प्रभु को, अहंकार के नशे में तुम?
प्रभु-पहचान का पता लगाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!
बहुत भटकाते हैं हमारे मन को, जगत के ये खेल-तमाशे,
सच्चा सुख व आनंद पाना है तो, हउमै को दूर करना होगा!



-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर', बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर। मो. ९८७२२-५४९९०

श्री गुरु नानक देव जी की शैक्षणिक देन

*-डॉ. अमृत कौर**

--विदिआ वीचारी तां परउपकारी ॥
(पन्ना ३५६)
--पड़ि पड़ि गडी लदीअहि . . . ॥ (पन्ना ४६७)
--पड़िआ मूरखु आखीऐ जिसु लबु लोभु अहंकारा ॥ (पन्ना १४०)

उपरोक्त शैक्षणिक विचार श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में सर्वत्र बिखरे पड़े हैं जिनको इकट्ठा करके एक सुगठित नियमित शिक्षा-प्रणाली का निर्माण किया जा सकता है, जिसके द्वारा शिक्षा क्या है, शिक्षा का जीवन में स्थान, शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षा का पाठ्यक्रम, शिक्षण-विधियां, अध्यापक का संकल्प, शिक्षा और अनुशासन आदि के बारे में उनके विचारों को जाना जा सकता है। सिक्ख धर्म के प्रवर्तक श्री गुरु नानक देव जी बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे। वे एक महान दार्शनिक और शिक्षा शास्त्री भी थे, जिन्होंने अज्ञान के अंधेरे में भटकती साधारण जनता के मनों में ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित की। सृजनात्मक प्रतिभा के स्वामी गुरु जी एक क्रियात्मक सुहृदय अध्यापक भी थे, जिन्होंने तत्कालीन *"अंधी रयति गिआन विहूणी भाहि भरे मुरदारु"* के मार्गदर्शन के लिए अपने जीवन का अधिकांश समय व्यतीत किया। उनकी यात्राएं चलती-फिरती पाठशालाएं थीं। डॉ. रोशन लाल आहूजा[१], डॉ. लेटिनर[२], प्रिं. तेजा सिंघ[३] के अनुसार गुरु नानक साहिब नवीन शैक्षणिक आंदोलन के नेता थे। उन्होंने सिक्खों को गुरुद्वारों के साथ संलग्न प्रारंभिक स्कूल खोलने की प्रेरणा दी। जहां भी सिक्खों का गुरुद्वारा था वहां लड़के और लड़कियों को पढ़ाने के लिए पाठशाला भी थी। यह परंपरा आधुनिक समय तक देखी जा सकती है। डॉ. रोशन लाल आहूजा के अनुसार इस शिक्षा-प्रसार के आंदोलन में गुरु नानक साहिब की देन तीन प्रकार की है। इन प्रारंभिक स्कूलों में बच्चों और प्रौढ़ व्यक्तियों को धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। दूसरा, मातृ-भाषा पंजाबी को शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयोग किया जाने लगा, जिसके द्वारा शिक्षा का प्रसार हुआ और शिक्षा को साधारण लोगों के द्वार तक पहुंचने में सहायता मिली। तीसरा, लोगों के मनों को रोशन करने के लिए दोहरी शिक्षा-प्रणाली अपनाई जाने लगी। बालिगों को शिक्षा मौखिक रूप से कथा, कीर्तन, उपदेश, प्रवचनों, मेलों, उत्सवों के आयोजन द्वारा प्रदान की जाने लगी और बच्चों को बचपन से नियमित रूप से शिक्षित करने का प्रयास किया जाने लगा।

गुरु जी की बाणियों, विशेषत: 'जपु जी साहिब', 'आसा की वार', 'पटी', 'दखणी ओअंकार' आदि में बिखरे उनके शिक्षा संबंधी विचारों को एकत्रित कर एक योजनाबद्ध शिक्षा-प्रणाली तैयार की जा सकती है जो किसी भी प्राचीन शिक्षा-प्रणाली से सहज में टक्कर ले सकती है। शिक्षा क्या है, शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षा-प्रणाली, शिष्य, अनुशासन आदि संबंधी उनके विचारों की इस प्रकार व्याख्या की जा सकती है:

१. आध्यात्मिक विकास करना शिक्षा है : शिक्षा वह अमृतदायिनी कल्याणकारी शक्ति है

***१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०४ (पंजाब), मो. :९८१५१-०९९५७*

जो ज्ञान प्रदान कर आत्मानुभव में सहायक सिद्ध होती है। गुरु नानक साहिब के अनुसार भी शिक्षा का उद्देश्य दैवी ज्ञान की प्राप्ति द्वारा आत्मानुभव और आत्म-विकास में सहायता करना है। ज्ञान का दीपक प्रज्वलित हो जाने से मन का अंधेरा दूर हो जाता है और प्रभु की प्राप्ति में सहायता मिलती है :

पोथी पुराण कमाईऐ ॥
भउ वटी इतु तनि पाईऐ ॥
सचु बूझणु आणि जलाईऐ ॥
इहु तेलु दीवा इउ जलै ॥
करि चानणु साहिब तउ मिलै ॥ (पन्ना २५)

पोथी-पुराण के अध्ययन-अध्यापन से शरीर रूपी दीपक में प्रेम की बाती और सत्य का तेल डाल कर जलाने से जो ज्ञान का प्रकाश होगा उससे प्रभु-मिलन संभव है। अत: वे ज्ञानी विद्वान मनुष्य-मात्र को अपने आप को पहचानने पर बल देते हैं :

प्रणवति नानक गिआनी कैसा होइ ॥
आपु पछाणै बूझै सोइ ॥ (पन्ना २५)

अत: शिक्षा का पाठ्यक्रम धर्म और नैतिकता पर आधारित होना चाहिए ताकि विद्यार्थी-जीवन में उच्च गुणों का विकास हो सके :

जालि मोहु घसि मसु करि मति कागदु करि सारु ॥
भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु ॥
लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारावारु ॥
(पन्ना १६)

२. आंतरिक शक्तियों को विकसित करना शिक्षा है : आधुनिक शिक्षा शास्त्री इस पर एक मत रखते हैं कि आंतरिक शक्तियों का विकास ही शिक्षा है। शिक्षा एक दोहरी प्रक्रिया है जिसमें अध्यापक शिष्य की इन आंतरिक शक्तियों के विकास में सहायता करता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के शिक्षा-दर्शन के अनुसार मानव व्यक्तित्व असीम शक्तियों का भंडार है। गुरु नानक साहिब के कथनानुसार मानव-बुद्धि में अनगिनत रत्न, जवाहर, माणिक रूपी ज्ञान-रत्न पाए जाते हैं, जिन्हें गुरु की शिक्षा सुन कर खोजा जा सकता है :

मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी ॥ (पन्ना २)

यह शरीर रूपी सागर अनेक ज्ञान-रत्नों का भंडार है :

रतना रतन पदारथ बहु सागरु भरिआ राम ॥
(पन्ना ४४२)

इस हरि मंदर रूपी शरीर में अनेकों ज्ञान-रत्न छिपे हुए हैं, जिन्हें विकसित और प्रफुल्लित करना शिक्षा है :

हरि मंदरु एहु सरीर है गिआनि रतनि परगटु होइ ॥ (पन्ना ३४६)

इन ज्ञान-रत्नों को गुरु के पथ-प्रदर्शन द्वारा खोजा और विकसित किया जा सकता है। ये विचार गुरबाणी में स्थान-स्थान पर दर्ज हैं। यह ज्ञान का तीर्थ हमारे अंदर है जो अनंत शक्तियों का स्रोत है, जिसमें स्नान कर हमारी अंतरात्मा निर्मल और स्वच्छ हो जाती है। अंतरात्मा में छिपे इन ज्ञान-रत्नों को गुरु के मार्गदर्शन में खोज कर ज्ञान तत्व की प्राप्ति होती है जो शिक्षा का परम उद्देश्य है। गुरु जी के ये विचार आधुनिक शिक्षा-शास्त्रियों के विचारों से मेल खाते हैं जो उनकी शिक्षा-प्राणाली को दोहरी प्रक्रिया बनाते हैं, जहां शिक्षा-पथ पर अग्रसर होने के लिए गुरु और शिष्य के सहयोग की आवश्यकता है।

३. ज्ञान-प्राप्ति शिक्षा है : शिक्षा मनुष्य को अज्ञान के अंधेरे से निकाल कर ज्ञान का प्रकाश प्रदान करती है। शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सांस्कृतिक धरोहर का संचित ज्ञान एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को प्रदान करती है। ज्ञान के

प्रकाश के द्वारा मनुष्य को अपने अस्तित्व की पहचान होती है। ज्ञान मनुष्य को दिव्य दृष्टि प्रदान करता है, जिससे आत्मानुभव और आत्म-प्रकाशन में सहायता मिलती है। गुरबाणी में *"सगल तत महि ततु गिआनु"* माना गया है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ज्ञान को गुरु मानते हुए ज्ञान की बढ़नी (झाड़ू) हाथ में लेकर मानसिक कातरता और कमजोरी को दूर करने के लिए कहते हैं। गुरु नानक साहिब के अनुसार ज्ञान-प्राप्ति के द्वारा तन, मन और आत्मा तीनों प्रकाशित होते हैं :

गिआन पदारथु पाईऐ त्रिभवण सोझी होइ ॥
(पन्ना ६०)

ज्ञान केवल जीवन को प्रकाशित ही नहीं करता बल्कि साधक को दैवी प्रसन्नता भी प्रदान करता है। गुरु नानक साहिब ज्ञान के प्रकाश की लहरों से प्रकाशित 'गिआन (ज्ञान) खंड' का वर्णन करते हैं, जहां पर प्रचंड ज्ञान के दैवी संगीत के द्वारा प्राप्त प्रसन्नता के अनंत स्रोत बह रहे हैं :

गिआन खंड महि गिआनु परचंडु ॥
तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु ॥ (पन्ना ८)

प्रो हरनाम दास[४] के अनुसार ज्ञान आंतरिक, मानसिक, आध्यात्मिक प्रकाश है। 'गिआन खंड' के वासियों में ये गुण प्रधान होते हैं और वे हैं- नाद (आध्यात्मिक संगीत), विनोद (विनोदप्रियता), कोड (क्रीड़ा भावना), आनंद (हास्यरस) अर्थात् प्रसन्नचित्त रहना। जीवन के ये बड़े मीठे व रसीले गुण हैं, जिनके द्वारा मनुष्य अंदर-बाहर प्रसन्नता के अणु-परमाणु बिखेरता है। उसका मुख दैवी मुस्कान के द्वारा प्रकाशित रहता है। मन अनंत शक्तियों का स्वामी है। इसकी महान शक्तियां--सुरति, मति, मनि, बुद्धि हैं। इनको 'सरम खंड' में घड़ा जाता है--*"तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि ॥"* 'सुरति' मन की वह शक्ति है जो कि ज्ञान और विचार को सुधि के अंदर जागृत एवं प्रफुल्लित करती है। 'मति' जीवन का आंतरिक प्रकाश है। 'बुद्धि' जीवन को पथ-प्रदर्शित करने वाली सबसे बड़ी शक्ति है। 'सुधि' जागृति, चेतनता और सूझबूझ की रोशनी है। जीवन की इन महान शक्तियों-- 'सूरति, मति, मनि, बुद्धि व सुधि' का विकास 'धरम खंड' में जाकर होता है जिसकी प्राप्ति जीवन का परम उद्देश्य है।

४. केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करना ही शिक्षा नहीं है : शिक्षा में ज्ञान-प्राप्ति का विशेष स्थान है परंतु कोरा पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करना और परीक्षाएं पास करना ही शिक्षा नहीं है। गुरु जी के अनुसार 'ज्ञान' वो है जो जीवन-कला सिखाए, दर्शन-क्रिया के लिए प्रेरित करे, जीवन के सुंदर दार्शनिक विचार जीवन को श्रेष्ठ और सुखदायक बनाने में सहायता करे। गुरु जी अपने समय के उन विद्वानों की सार्थक आलोचना करते हैं जो निरर्थक वाद-विवाद के लिए ज्ञान इकट्ठा करते थे परंतु शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य को अनुभव नहीं करते थे :

पड़ि पड़ि पंडितु बादु वखाणै ॥
भीतरि होदी वसतु न जाणै ॥ (पन्ना १५२)

कोरा ज्ञान इकट्ठा करना और उसका आचरण न करना मन पर बोझ है :

कथनी बदनी पड़ि पड़ि भारु ॥ (पन्ना ४१२)

बिना अनुभव किए किताबों का ढेर पढ़ना बेकार है। यह मस्तिष्क पर एक बोझ है। गुरबाणी में कोरे ज्ञान और विद्वता में अंतर करने के लिए रावण का उदाहरण दिया गया है जो महान पंडित और शास्त्रों का ज्ञाता होने पर भी अपने मन पर नियंत्रण न कर सका जो उसके विनाश का कारण बनी।

संस्कृत के प्रकांड पंडित धर्मदास, जो अपने

ज्ञान-प्रदर्शन के लिए ऊंट लादे घूमता था, को आधार बनाकर गुरु जी कहते हैं कि वास्तविक रूप से शिक्षित वो व्यक्ति है जो प्राप्त ज्ञान पर आचरण करने का प्रयास करता है :

पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ ॥
पड़ीऐ जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास ॥
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख ॥
(पन्ना ४६७)

संसार में विद्वानों की कमी नहीं, परंतु वास्तविक ज्ञानी वो है जो आचारवान है :

जगि गिआनी विरला आचारी ॥
जगि पंडितु विरला वीचारी ॥ (पन्ना ४१३)

५. चरित्र-निर्माण और नैतिक विकास के लिए शिक्षा: "गुण वीचारे गिआनी सोइ ॥ गुण महि गिआनु परापति होइ ॥" गुरु नानक साहिब के अनुसार वह मनुष्य गधे के समान है जो गुणहीन होते हुए भी अपने पर अभिमान करता है :

नानक ते नर असलि खर
जि बिनु गुण गरबु करंत ॥ (पन्ना १४११)

गुरु जी की इन उक्तियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ज्ञान-प्राप्ति और नैतिक विकास में गहरा संबंध है। नैतिक विकास आध्यात्मिक विकास में भी सहायक सिद्ध होता है। नैतिक विकास आध्यात्मिक विकास की नींव है। अत: गुरु जी शुभ आचरण को शिक्षा-प्राप्ति का प्रमुख उद्देश्य मानते हैं :

सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥
(पन्ना ६२)

सच्चा ज्ञान चरित्र-निर्माण और पवित्रता के विकास में सहायक सिद्ध होता है। दैवी ज्ञान जीवन में क्रियात्मक रूप से गुणों के विकास द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। यह गुण मित्र की भांति अवगुणों पर विजय प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होते हैं :

नानक अउगुण जेतड़े तेते गली जंजीर ॥
जे गुण होनि त कटीअनि से भाई से वीर ॥
(पन्ना ५९५)

इसलिए गुरु जी समाज को गुणवान बनाने के लिए आपस में गुणों की सांझ करने की प्रेरणा देते हैं :

गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥
जे गुण होवन्हि साजना मिलि साझ करीजै ॥
(पन्ना ७६५-६६)

भारत के प्राचीन शिक्षा-शास्त्री एवं धार्मिक ग्रंथ पुस्तकीय शिक्षा प्राप्त करने की अपेक्षा विद्यार्थी के नैतिक विकास पर अधिक बल देते हैं। हरबट सपैंसर[५] के अनुसार 'शिक्षा' शब्द के उद्देश्य को एक शब्द में वर्णित किया जा सकता है और वो है 'नैतिक निर्माण'।

६. क्रियात्मक जीवन के लिए शिक्षा : गुरु जी सैद्धांतिक दार्शनिक न होकर क्रियात्मक शुभ कर्मों द्वारा जीवन-निर्माण में विश्वास रखते हैं। उनके अनुसार कर्म करना ही वास्तविक जीवन-धर्म है। नेक कमाई करना, कड़े परिश्रम द्वारा जीविका अर्जित करना गुरु जी की शिक्षा-प्रणाली का अविभाज्य अंग है। उन्होंने मलिक भागो की अपेक्षा भाई लालो को प्राथमिकता देकर कर्म को जीवन का बेजोड़ शासक कहा। उनकी शिक्षा आलौकिक जीवन की झलक दिखाती हुई भी पार्थिव जीवन से मुंह नहीं मोड़ती।

गुरु नानक साहिब जीवन निर्वाह करने के लिए कड़े परिश्रम पर बल देते हुए उन गुरु-पीरों की निंदा करते हैं जो अपने भरण-पोषण के लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं :

गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ ॥
ता कै मूलि न लगीऐ पाइ ॥ (पन्ना १२४५)

बढ़िया क्रियात्मक परिश्रम का जीवन जीने के लिए स्वस्थ, मजबूत शरीर का होना आवश्यक है। शारीरिक स्वास्थ्य के लिए गुरु जी कड़े परिश्रम द्वारा शारीरिक गठन और उचित

खान-पान द्वारा इसे विषय-विकारों से बचाने पर बल देते हैं :

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥
जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥
(पन्ना १६)

गुरु जी की शिक्षा-प्रणाली में कर्म, भक्ति और ज्ञान का संगम है। यहां तक कि आधुनिक शिक्षा-शास्त्रियों की भांति वे शिक्षा में खोज पर भी बल देते हुए कहते हैं : *"खोजी उपजै बादी बिनसै ॥"* इसलिए वे शिक्षा की सरल नाटकीय विधि को अपनाते हुए हरिद्वार में पंडितों को कहते हैं कि यदि तुम्हारा पानी सूर्य तक पहुंच सकता है तो मेरा पानी मेरे खेतों में क्यों नहीं पहुंच सकता?

७. मातृ-भाषा की शिक्षा द्वारा साहित्यिक, सांस्कृतिक विकास पर बल : गुरु जी को अपने देश की भाषा, संस्कृति, सभ्यता से असीम प्यार था। उन्होंने अपने शिष्यों को अपनी मातृ-भाषा पंजाबी में शिक्षा ग्रहण करने की प्रेरणा दी। गुरु जी अपने समय के उन लोगों की आलोचना करते हैं जिन्होंने अपनी मातृ-भाषा व सभ्यता का त्याग कर विदेशियों की भाषा व सभ्यता को अपना लिया था:

--खत्रीआ त धरमु छोडिआ मलेछ भाखिआ गही ॥ (पन्ना ६६३)

--कूजा बांग निवाज मुसला नील रूप बनवारी ॥
घरि घरि मीआ सभनां जीआं बोली अवर तुमारी ॥ (पन्ना ११९१)

उनके अनुसार मातृ-भाषा की शिक्षा सांस्कृतिक धरोहर को संभालने के लिए आवश्यक है। उन दिनों फारसी, उर्दू का बोलबाला था। मातृ-भाषा पंजाबी को शिक्षा का माध्यम बनाना शिक्षा के क्षेत्र में उनकी बहुत बड़ी देन है। पंजाबी माध्यम के द्वारा वे शिक्षा को जनता के द्वार तक ले गए।

कलम में तलवार से भी अधिक शक्ति होती है। *"धनु लेखारी नानका"* का अनुसरण करते हुए दैवी बाणी की रचना द्वारा जनमानस की कायाकल्प कर दी, इतिहास को नया मोड़ दिया, बाणी-गायन को जीवन का जरूरी अंग बना दिया : *"सबदु गुरू सुरति धुनि चेला ॥"* सचमुच गुरबाणी युगों-युगों से 'शबद-गुरु' बनकर, दीप-स्तंभ बन कर भावनात्मक, कलात्मक, सौंदर्यात्मक, आध्यात्मिक आनंद प्रदान कर रही है। आधुनिक युग में भी बाणी का अध्ययन-अध्यापन खोज का कार्य जारी है।

गुरु नानक साहिब पंजाबी साहित्य के जन्म-दाता हैं। पंजाबी साहित्य पर उनका अमिट प्रभाव है। आपकी बाणी अनेक लेखकों-साहित्यकारों की प्रेरणास्रोत है जो इसे आधार बना पी. एच. डी. तक की डिग्रियां लेते हैं। गुरु जी की संपूर्ण बाणी रागों में रचित है, संगीतमयी है, जिसके कीर्तन द्वारा कलात्मक व भावनात्मक भूख शांत होती है।

८. सामाजिक, राजनैतिक विकास के लिए शिक्षा : मानवता की सेवा का संकल्प *"विदिआ वीचारी तां परपउकारी"* के इस महावाक्य में समाहित है। गुरु जी का यह फरमान शैक्षणिक विचारधारा में अद्वितीय है जिसे समाज सेवा योजना ने आदर्श के रूप में अपना लिया है। गुरु जी के सपनों का शिक्षक भी आर्थिक प्रलोभनों से ऊपर उठ कर कल्याण की दृष्टि से विद्यार्थियों को पढ़ाता है। जो शिक्षक केवल धन कमाने के लिए विद्या को बेचता है वह विष कमाता और विष खाता है :

मनमुखु बिदिआ बिक्रदा बिखु खटे बिखु खाइ ॥
(पन्ना ९३८)

नेक कमाई करना, कड़े परिश्रम द्वारा जीविका-अर्जन करना और उसमें से सामाजिक कल्याण तथा निर्माण के लिए दान देना गुरु जी

की शिक्षा-प्रणाली का अभिन्न अंग है : *"घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥ नानक राहु पछाणहि सेइ ॥"* संगत और पंगत के द्वारा जात-पात, ऊंच-नीच, अमीर-गरीब के भेदभाद को मिटाने का प्रयास किया। *"एकु पिता एकस के हम बारिक"* संतान द्वारा लोगों को समझाया कि हम सब एक परम पुरख परमात्मा की संतान हैं। *"सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥"* के कथन द्वारा स्त्री की स्थिति को सुदृढ़ किया।

"पाप की जंञ लै काबलहु धाइआ जोरी मंगै दानु वे लालो ॥" बाबर की पाप की बारात के हाथों निर्दोष भारतीयों की खून की होली खेली जाती देखकर गुरु नानक साहिब की दुखी आत्मा करुण-क्रंदन कर उठी और उन्होंने प्रभु को भी उलाहना देते हुए कहा:

--खुरासान खसमाना कीआ हिंदुसतानु डराइआ ॥
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ ॥
एती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ ॥
(पन्ना ३६०)

गुरु जी ने लोक-शोषक लोधी शासकों का भी कठोर शब्दों में विरोध किया, जैसे कि :

--कलि काती राजे कासाई ॥
--राजे सीह मुकदम कुते ॥ (पन्ना १२८८)

सीताराम कोहली[७] बाबर के शासन के विरुद्ध उच्चरित गुरु-शब्दों को विदेशी शासकों के विरुद्ध स्वतंत्रता-प्राप्ति की प्रथम आवाज मानता है। ज्ञानी लाल सिंघ[८] इस बाणी को तलवार की धार पर तीखी की हुई क्रांतिकारी बाणी मानते हैं। *"जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥ सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥"* उन्हें सिक्ख धर्म के सैनिक स्वरूप का जन्म-दाता बनाती है।

९. शिक्षा राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना के लिए : राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोने के लिए, प्रेम और सद्भावना का संदेश देने के लिए गुरु जी देश के एक कोने से दूसरे कोने तक, कभी आसाम तो कभी बंगाल, कभी कशमीर तो कभी लेह लद्दाख तक ही नहीं घूमे बल्कि तिब्बत, चीन, बर्मा, लंका, अरब, फ्रांस, मक्का, मदीना, बगदाद, तुर्किस्तान, मिस्र, अफगानिस्तान आदि देशों में अंतर्राष्ट्रीय एकता का पाठ पढ़ाने, सद्भावना उत्पन्न करने के लिए भी निरंतर घूमते रहे। गुरु जी भी अथक यात्री थे, बीस वर्ष निरंतर देश-देशांतरों में घूम कर जनता-जनार्दन को प्रेम, एकता, समन्वय, सौहार्द, भ्रातृत्व-भावना का दिव्य पाठ पढ़ाने के लिए निरंतर चलते रहे। नदी, नाले, पहाड़ कोई भी उनके पथ की बाधा न बन सके।

उन दिनों जब हिंदुओं और मुसलमानों में सांप्रदायिक वैमनस्य शिखरों पर था, उन्होंने अपनी शिक्षा में 'न कोई हिंदू न मुसलमान' का नारा देकर तथा उसे क्रियात्मक रूप देते हुए, भाई मरदाना जी को अपने जीवन भर का साथी बनाते हुए मानव एकता का दिव्य संदेश दिया। संगत-पंगत की स्थापना द्वारा जात-पात, ऊंच-नीच के भेदभाव को मिटा कर मनुष्य-मात्र को एक माला के मनकों के रूप में पिरोने के प्रयास द्वारा समाजवाद को स्थापित करने की चेष्टा की।

संदर्भ-सूची :

१. डॉ. रोशन लाल आहूजा, इंडीजिनियस ऐजूकेशन इन पंजाब, पृष्ठ १८५
२. जी. डब्ल्यू लेटिनर, हिस्टी ऑफ इंडीजिनियस ऐजूकेशन इन पंजाब, पृष्ठ १
३. प्रिं तेजा सिंघ, रेस्पांसीबिल्टी इन सिक्खइज़्म, पृष्ठ ११
४. प्रो हरनाम दास, जपु जी : परमारथ और सदाचार का मारग, लोकगीत प्रकाशन, चंडीगढ़, १९९५, पृष्ठ १४७
५. रसक-डाक्टरींज़स ऑफ ग्रेट ऐजूकेशनिट्स, पृष्ठ २०४
६. सीताराम कोहली--नानक बाणी में फलसफा-मध्यकालीन पंजाबी साहित्य, भाषा विभाग, पटियाला-१९२०, पृष्ठ ६४
७. ज्ञानी लाल सिंघ, गुरु नानक का शाहकार, भाषा विभाग, पटियाला, पृष्ठ २५३



श्री गुरु नानक साहिब जी की बाणी में नारी-चेतना

*-डॉ. अविनाश शर्मा**

भारतीय धर्म साधना के इतिहास में श्री गुरु नानक साहिब जी ऐसे महान विचारक एवं प्रतिभाशाली गुरु हैं जिन्होंने शताब्दियों की सीमा का उल्लंघन कर दीर्घ काल तक भारतीय जनता का पथ आलोकित किया और सही अर्थों में जनजीवन का नायकत्व किया। श्री गुरु नानक साहिब जी ने जिस पंथ की स्थापना की थी उसने उनके जीवन-काल में ही एक व्यापक संगठन का रूप धारण कर लिया था। 'नानक पंथ' की स्थापना तत्कालीन परिस्थितियों के कारण हुई थी किंतु उसका स्वरूप धार्मिक तत्वों के रंग से अनुरंजित था। गुरु नानक साहिब समन्वयशील और उदार प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। उनमें अद्भुत संगठन-शक्ति, क्षमाशीलता और दूरदर्शिता विद्यमान थी। गुरु नानक साहिब के काल में देश में धर्म-साधनों की बाढ़-सी आ गई थी तथा गुप्त-साधनाओं के अंतर्गत कृच्छ साधनाएं भी धर्म-क्षेत्र में प्रवेश पा गई थीं और धर्म अपने मार्ग से भटकने लगा था। ज्ञान-चर्चा के नाम पर पाखंड को प्राश्रय मिलने लगा था और समाज में अराजकता का वातावरण बन गया था। वाह्य आडंबर और वाह्य विधान ही धर्म बन सामान्यजन को भ्रमित करने लगे थे। ऐसी परिस्थितियों में श्री गुरु नानक साहिब जी ने वाह्य साधनों को गौण ठहरा कर मन की शुद्धता और आचरण की पवित्रता पर बल दिया। श्री गुरु नानक साहिब जी ने एकेश्वरवाद का संदेश देकर मूर्ति-पूजा और अवतारवाद से सामान्यजन को मुक्ति दिलाई। भक्ति में प्रेम-तत्व का समावेश कर उन्होंने भक्ति को और भी सुसाध्य एवं स्पृहणीय स्वरूप प्रदान कर भक्ति के द्वार सभी वर्गों के लिए खोल दिए।

आदि काल से ही हिंदू समाज में नारी को 'माया' कह कर तिरस्कृत किया जाता है। वैदिक काल में नारी को पुरुष के समान अधिकार प्राप्त थे और उसे समाज में सम्मानीय दर्जा प्राप्त था। मध्य काल में नित्यप्रति नए आक्रमणों के कारण सामाजिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न होने लगी थी जिसके परिणामस्वरूप नारी की स्थिति बद से बदतर होने लगी थी। नारी को प्रभु-मार्ग में बाधा तथा पापमयी माना जाने लगा था। गोस्वामी तुलसीदास ने तो कागज की बनी महिला की ओर भी देखने को मना किया था। उन्होंने लड़के को ही माता-पिता की संतान माना है, लड़की को नहीं, क्योंकि उनके अनुसार माता-पिता की मृत्यु के पश्चात पितृ-क्रिया करवाने का अधिकार लड़के को है लड़की को नहीं।

इब्नवतूता के अनुसार गुरु नानक साहिब के काल में दास-प्रथा प्रचलित थी और मुसलमान हिंदू कुलीन कन्याओं को अधिकाधिक संख्या में क्रय कर अपने घरों में रख लिया करते थे। मुहम्मद बिन कासिम ने चीन के सम्राट को सौ हिंदू स्त्रियों को उपहार के रूप में भेंट किया था। इसके साथ ही ऐसे हिंदू राजाओं का अभाव नहीं था जो मुस्लिम महिलाओं, विशेषत: सैयद

**१२०५, अर्बन इस्टेट, फेज-१, जलंधर-१४४०२२*

स्त्रियों को दासी रूप में खरीद कर उन्हें नृत्य और संगीत की शिक्षा देकर उन्हें अपनी रखैल बना लेते थे। हिंदू समाज में बहुविवाह और पुनर्विवाह प्रचलित था किंतु विधवा विवाह का कोई प्रावधान नहीं था। विदेशी पर्यटकों ने सती-प्रथा का भी वर्णन किया है। पर्दा-प्रथा उन दिनों बहुत व्यापक थी। इस प्रकार के सामाजिक विश्वासों ने नारी को पुरुष की दासी बना दिया था। यह एक ऐसी दासी थी जो पुरुष की खुशी के लिए अपना सब कुछ अर्पण करती फिर भी वह दासी की दासी ही रहती।

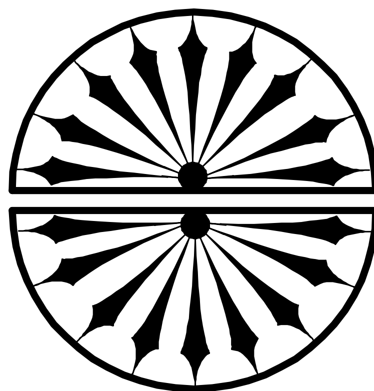
गुरु नानक साहिब ने जिस धर्म की स्थापना की उसकी 'रहित मर्यादा' में पुरुष और स्त्री को बराबर का दर्जा दिया गया है और गुरबाणी में नारी को *'घर की गीहन', 'नेक जन'* तथा *'पारजात घर आंगन मेरे'* कह कर आदर एवं सम्मान दिया गया है।

गुरु नानक साहिब ने सामाजिक तथा धार्मिक पुरातन परंपराओं का खंडन किया है। इसके साथ ही उन्होंने नारी के प्रति गलत धारणाओं का भी विरोध किया है। उन्होंने बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा है कि संसार में स्त्री-पुरुष होने से कोई अंतर नहीं पड़ता, बल्कि दोनों द्वारा किए गए अच्छे-बुरे कार्यों के आधार पर ही उनकी कीमत आंकनी चाहिए। औरत को तो किसी भी तरह से बुरा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वह तो पुरुष की जन्म-दाती है। राजाओं, महाराजाओं तथा महान व्यक्तियों को जन्म देने वाली औरत किस प्रकार बुरी कही जा सकती है?

गुरु नानक साहिब ने 'आसा की वार' में औरत की महत्ता को बहुत विद्वतापूर्ण ढंग से तथा शिद्दत के साथ व्यक्त किया है। जिस औरत की हमारे समाज, हमारे पुराने धर्मों तथा पुरातन आचार्यों ने प्रत्येक स्थान पर निंदा की है उनको यह सोचना चाहिए था कि आखिर उनको भी तो जन्म देने वाली औरत ही है। श्री गुरु नानक साहिब जी ने स्पष्ट किया है कि औरत के कारण ही पुरुष संसार में जन्म लेता है, औरत के साथ ही उसका विवाह होता है तथा औरत के साथ ही उसके सामाजिक संबंध बनते हैं। फिर ऐसी औरत को 'मंदा' कैसे कहा जा सकता है?

सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥
(पन्ना ४७३)

श्री गुरु नानक साहिब जी ने अपने विचार केवल काव्य रूप में ही व्यक्त नहीं किए बल्कि 'नारी चेतना' की एक लहर भी पैदा की। उन्होंने सामाजिक पाखंडियों धर्म के ठेकेदारों, मठाधीशों तथा राजदरबारों में स्वयं जाकर स्त्री-पुरुष की बराबरी का संदेश दिया। उनका यह कदम एक क्रांति थी, एक चुनौती थी समाज को बदलने की। उनके इस कार्य के लिए मानव समाज उनका सदा ऋणी रहेगा। 



श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बलिदान का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

*-डॉ. महीप सिंघ**

"Whence shall arise the shout of love, if it be not from the summit of sacrifice?"

विक्टर ह्यूगो की इस उक्ति का संदर्भ मेरे पास नहीं है परंतु श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बलिदान के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य पर दृष्टिपात करते समय इसकी संगति मेरे सामने एकाएक उजागर हो उठी है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बलिदान से लगभग दो शताब्दी पूर्व गुरु नानक साहिब ने आह्वान दिया था :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

प्रेम और बलिदान का यह अन्योन्याश्रित संबंध क्या है? प्रेम जीवन को सार्थक बनाता है और प्रेम-पथ की पुकार को बलिदान के उच्च शिखर से गुंजारित किया जाता है। श्री गुरु नानक देव जी ने दो-टूक शब्दों में कह दिया था--"यह रास्ता जितना आसान दिखाई देता है, उतना है नहीं। इस गली में आना है तो सिर को हथेली पर रखकर आना होगा, सिर देना होगा, पर उफ तक नहीं करनी होगी।"

आज से तीन शती पूर्व श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने अपना बलिदान दिया-आत्माहुति। उनके सम्मुख एक स्थिति ऐसी थी जिसमें एक ओर संसार का एक अत्यंत शक्तिशाली साम्राज्य था। उसका एक धर्मांध, क्रूर और चालाक शासक था। उसकी असीम शक्ति थी। दूसरी ओर निरीह पद्दलित, अपमानित, उपेक्षित, विशृंखलित और अनेक कुरीतियों-अंधविश्वासों में जकड़ी हुई जनता थी। दोनों के बीच खड़े थे श्री गुरु तेग बहादर साहिब और उनकी पीठ पर थी दो शती की एक परंपरा जिसका सूत्रपात किया था गुरु नानक साहिब ने।

हमारे देश की अनेक गौरवपूर्ण परंपराएं हैं--त्याग, सेवा, परदुख-कातरता, तप, संयम, वीरता आदि की अनेक घटनाएं हमें भारतीय इतिहास के पृष्ठों पर बिखरी हुई मिल जाएंगी, परंतु क्या इस देश में बलिदान (शहादत) की कोई परंपरा रही है? एक महत् उद्देश्य को सम्मुख रखकर, किसी ऐसे आदर्श के लिए जो व्यक्ति को ठीक लगे, उसके लिए वह हंसते-हंसते मृत्यु का वरण कर ले, क्या ऐसे उदाहरण अपने इतिहास में हैं?

मुझे लगता है कि त्याग और बलिदान में एक मौलिक अंतर है। त्याग व्यक्तिनिष्ठ होता है और बलिदान समाजनिष्ठ। त्याग स्वधर्म, स्वकर्त्तव्य, स्वमुख के लिए किया जाता है। बलिदान जनहित के किसी ऐसे उद्देश्य या लक्ष्य को सम्मुख रखकर किया जाता है जिसमें व्यक्ति की अपेक्षा समाज की भूमिका महत्तर हो उठती है। इस दृष्टि से भारतीय परंपराओं का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि हमारे देश में त्याग की परंपराएं तो हैं परंतु बलिदान की नहीं। यहां व्यक्ति अपने मोक्ष, अपने कर्त्तव्य, अपने धर्म की सिद्धि के लिए बड़े से

*१०८, शिवाजी पार्क, पंजाबी बाग, नई दिल्ली-११००२६, मो : ९३१३९-३२८८८

बड़ा त्याग तो करता रहा है परंतु किसी सामूहिक सामाजिक आदर्श की रक्षा के लिए अपने जीवन की बाजी लगा बैठा हो, दधीचि को छोड़कर ऐसा कोई उदाहरण मुझे याद नहीं आता।

परंतु सामी जातियों के बलिदान की एक परंपरा बन चुकी थी। दो हजार वर्ष पूर्व ईसा ने अपनी उस सलीब को अपने ही कंधे पर ढोया था, जिस पर उन्हें चढ़ा दिया गया था। ईसा के बलिदान की घटना ईसाई जगत को आलोकित करने में सदियों तक जितना बड़ा प्रेरणास्रोत रही है, उतनी बड़ी अन्य कोई घटना नहीं। करबला के मैदान में हजरत इमाम हुसैन शहीद हुए, जिसकी चिंगारी आज भी उनके अनुयायी मुसलमानों के हृदय में सुलगती रहती है और उन्हें उत्प्रेरित करती रहती है। मौलाना मोहम्मद अली का यह शेयर इसी तथ्य का द्योतक है :

कत्ले हुसैन असल में मर्गे यजीद हैं,
इस्लाम जिंदा होता है हर करबला के बाद।

मुझे लगता है कि हमारे देश में बलिदानी परंपरा की सही शुरुआत श्री गुरु अरजन देव जी के बलिदान (सन् १६०६) से होती है। अपनी आत्म-कथा 'तुजके-जहांगीरी' में जहांगीर ने जब यह लिखा कि श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा किये जा रहे कार्यों को बंद करने तथा उन्हें अपने मत में दीक्षित करने के लिए मैंने मुरतजा खान से कहा कि वह उन्हें यातनएं देकर मार डाले, तो इस बलिदान की पुष्टि हो जाती है। श्री गुरु अरजन देव जी का बलिदान इस प्राचीन देश में एक ऐसी परंपरा का सूत्रपात था जो आगे आने वाले वर्षों में कल्पनातीत ढंग से पल्लवित और पुष्पित हुई।

बलिदान एक वृहत्तर विद्रोह की भूमिका का काम करता है और विद्रोह के बीज 'अस्वीकार' में से अंकुरित होते हैं। एक स्थिति ऐसी आ जाती है जब व्यक्ति कह उठता है-- अब और नहीं, बहुत सह लिया, बस, अब और नहीं सहूंगा। अन्याय का यह 'अस्वीकार' हमें दो विभिन्न दिशाओं की ओर प्रेरित कर सकता है। एक दिशा है कि हम अन्याय की ओर से पूरी तरह विरक्त हो जाएं। यह मान लें कि जो कुछ हमारे चारों ओर घटित हो रहा है, हम उसके सहभागी नहीं हैं। अन्याय करने वाली इस दृश्यमान संसार की शक्तियों से परे एक सत्य है, वही अंतिम सत्य है और हमारा सीधा सरोकार उससे है। यह स्थिति पलायन की स्थिति है, विवशता और विकल्प-हीनता की स्थिति है। हमारे देश के भक्ति-काल का एक विशाल भाग इस विवशता और विकल्प-हीनता की मानसिकता से उत्पन्न अभिव्यक्तियों से भरा पड़ा है।

परंतु 'अस्वीकार' की दूसरी स्थिति उससे सीधे जूझने में है। यहां जीवन का मोह निरर्थक हो जाता है और मृत्यु का वरण जूझने की पहली शर्त बन जाती है। भक्ति-काल में भक्त कबीर जी और गुरु नानक साहिब की अनेक उक्तियां लक्ष्य-प्राप्ति के लिए 'सिर को हथेली पर रखने', 'पहले मृत्यु को कबूल करने' की दिशा की ओर संकेत करती हैं :

--पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस ॥
(गुरु नानक साहिब, पन्ना ११०२)

--जउ तनु चीरहि अंगु न मोरउ ॥
पिंडु परै तउ प्रीति न तोरउ ॥
(भक्त कबीर जी, पन्ना ४८४)

श्री गुरु तेग बहादर साहिब के सम्मुख भी एक ऐसी 'अस्वीकार' की स्थिति आ गयी थी। अठारहवीं शती के एक ग्रंथ 'गुर बिलास' में

लिखा है कि कशमीर के सूबेदार के अत्याचारों से पीड़ित कशमीरी ब्राह्मणों का एक समूह अनंदपुर साहिब में श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास आया और उन्हें हिंदुओं पर किये जा रहे दुर्व्यवहार की व्यथा सुनाई। श्री गुरु तेग बहादर साहिब जो इस अन्यायपूर्ण स्थिति का सामना करने की दिशा में संचित थे, कशमीर के ब्राह्मणों की बात सुनकर विचारमग्न हो गये।

'गुर बिलास' का रचयिता लिखता है कि श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने उन ब्राह्मणों से कहा कि "जाओ, औरंगजेब से कह दो कि यदि (श्री गुरु) तेग बहादर (साहिब) इस्लाम स्वीकार कर लेंगे तो हम भी अपना धर्म परिवर्तन कर लेंगे।"

यह 'अस्वीकार' की खुली घोषणा थी। इतिहासकार डॉ जदुनाथ सरकार ने लिखा है कि उन्होंने (श्री गुरु तेग बहादर साहिब) कशमीर के हिंदुओं को इसलाम में जबरदस्ती दीक्षित करने का खुला विरोध किया था। दिल्ली में बुलाए जाने पर उन्हें इसलाम धर्म ग्रहण करने के लिए विवश किया गया और 'अस्वीकार' करने पर पांच दिन तक यातनाएं देने के बाद उनका शिरच्छेद कर दिया गया।[१]

इस संदर्भ में सर्वाधिक उल्लेखनीय स्थिति यह है कि कशमीरी ब्राह्मणों की बात सुनकर श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने कहा कि इस अत्याचार का सामना करने के लिए किसी महापुरुष को अपना बलिदान देना होगा, फिर उन्होंने इस महत् कार्य के लिए अपने आप को चुना।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब अपनी संपूर्ण आयु में संसार और सांसारिकता से विरक्त रहकर 'हरि' को अपने ही घट में खोजने के गीत गाते रहे :

पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई ॥
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई ॥
(पन्ना ६८४)

गुरु जी लोगों को यह उपदेश देते रहे कि मन में अभिमान रखकर तीर्थ-यात्रा करना, व्रत रखना, दान करना उसी तरह निष्फल जाता है जैसे हाथी का स्नान :

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु ॥
नानक निहफल जात तिह जिउ कुंचर इसनानु ॥
(पन्ना १४२८)

परंतु एक स्थिति ऐसी आयी जब उन्होंने अन्याय और अत्याचार की अग्नि में स्वयं को न्यौछावर करने का निर्णय ले लिया। वे जानते थे कि उनकी कुर्बानी के बाद विद्रोह भरे संघर्ष का आगाज होगा।

गुरु जी का बलिदान इतिहास की एक बहुत जरूरी मांग थी, परंतु इतिहास ने उनसे यह मांग क्यों की? मैंने प्रारंभ में ही संकेत किया है कि इस देश में सब कुछ था--त्याग, सेवा, तप, साधना, वीरता, फिर भी यह देश पतन की ओर इतनी तेजी से क्यों बढ़ा? मैं समझता हूं कि इस देश में सदियों में जिस धार्मिक-दार्शनिक चिंतन ने विकास किया और जिस सामाजिक व्यवस्था को यहां स्वीकृति और प्रश्रय मिला उसने व्यक्ति की मानसिकता को लघुतम इकाइयों में समेट दिया। आध्यात्मिक स्तर पर मनुष्य केवल आत्म-मोक्ष एवं स्व-कल्याण की कामना करने लगा और देश तथा समाज तो बहुत दूर, स्वयं अपनी पत्नी और संतान ही उसे अपनी मोक्ष-प्राप्ति में सर्वाधिक बाधक दिखायी देने लगी। सामाजिक स्तर पर वह असंख्य जातियों में बंटता चला गया और उसमें भी लगातार

सिमट-सिमट कर एकाकी बनता गया। व्यक्ति में एक ऐसी धार्मिकता ने जन्म लिया, जिसका उद्देश्य परम-सत्ता की खोज नहीं, प्रत्युत यह विचार था कि किसका छुआ हुआ पानी पीना चाहिए और किसका नहीं; किसका छुआ हुआ खाना खाना चाहिए और किसका नहीं; किसके स्पर्श से अशुद्ध होने पर आदमी स्नान करने से पवित्र हो जाता है और किसके स्पर्श से हड्डी तक अपवित्र हो जाती है। इस स्थिति में उसके सम्मुख किसी प्रकार की व्यापक, सामूहिक, सामाजिक दृष्टि नहीं रही। हर व्यक्ति का देवता अलग, हर कुल का कुल-देवता अलग, हर व्यक्ति की मान्यताएं अलग हो गयीं। एकाकीपन की मानसिकता में व्यक्ति बड़े से बड़ा त्याग कर सकता है, अद्भुत वीरता का प्रदर्शन भी कर सकता है, परंतु सामूहिक दृष्टि का विकास किये बिना न तो वह अच्छा सैनिक बन सकता है और न ही सैनिक बनकर बलिदान कर सकता है। उस युग को जरूरत त्यागियों की नहीं बलिदानियों की थी, वीरों की नहीं वीर सैनिकों की थी।

'अवर ओरियंटल हैरिटेज' में विल दुरां लिखता है कि जात-पात के भेदभाव से दुर्बल हो जाने के कारण ही हिंदू जाति आक्रामकों के सामने विवश होती गयी। आक्रामकों के प्रहार सहते-सहते इसकी अवरोध शक्ति का दीवाला निकल गया और जब आत्म-रक्षा का कोई उपाय नहीं रहा तब वे आलौकिक बातों में अपना त्राण खोजने लगे। अपने आप को दिलासा देने के लिए उन्होंने इस दलील का आश्रय लिया कि स्वाधीनता हो या पराधीनता दोनों ही माया की वस्तुएं हैं। जीवन क्षणभंगुर है। अतएव व्यक्ति या समाज की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना कदाचित् ही आवश्यक कार्य हो। हिंदू जाति के क्लेशपूर्ण भीषण इतिहास में से जो शिक्षा निकलती है वो यह है कि निरंतर सावधानी बरते बिना सभ्यता की रक्षा नहीं की जा सकती। जातियों में शांति के लिए परस्पर प्रेम होना ठीक है, किंतु उन्हें अपने बारूद को गीला नहीं होने देना चाहिए।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने उस गीले बारूद को अपने रक्त की ऊष्मा दी। उनका बलिदान असंख्य पद्दलित और पीड़ित व्यक्तियों के आत्म-जागरण का प्रेरक बना जिसने बड़ी तेजी से एक व्यापक विद्रोह, एक दीर्घकालीन संघर्ष का स्वरूप ग्रहण कर लिया। गुरु साहिब का यह सूत्र वाक्य सभी ओर गूंजने लगा कि किसी को भयभीत मत करो, परंतु किसी का भय भी मत मानो :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥ *(पन्ना १४२७)*

अपनी सुदीर्घ परंपरा में किसी को भयभीत न करने की बात अनेक बार कही गयी थी, परंतु गुरु जी ने उसके साथ एक 'अस्वीकार' भी जोड़ा--"किसी का भय स्वीकार मत करो।" जब व्यक्ति में ज्ञान जन्म लेता है तो आत्मा जाग उठती है। वह अन्याय को, जिसे वह लंबे समय से स्वीकार करता आता है, सहने से इंकार कर देता है। वह अपने आप का इस नये अनुभूत सत्य के साथ गहरा तादात्म्य स्थापित कर लेता है और उसके लिए हंसते-हंसते जीवन अर्पण करने को तत्पर हो जाता है। वह मानने लगता है कि घुटनों के बल जीवित रहने की अपेक्षा पैरों पर खड़े-खड़े 'मरना' कहीं बेहतर है।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का बलिदान कुछ एक मूल्यों की रक्षा एवं प्रस्थापना के लिए किया गया बलिदान था। मूल्य सामान्यतः तथ्यों

से अधिकारों की ओर संक्रमण का प्रतिनिधित्व करते हैं। कठोर तथ्यों से स्वाधिकारों की ओर अग्रसित होना विद्रोह का सूचक है। सत्ता कहती है--ऐसा होना चाहिए; विद्रोह कहता है--मैं इसे इस तरह चाहता हूं। ऐसी स्थिति में संघर्ष स्वाभाविक रूप से उभरता है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने अपना बलिदान देकर इस संघर्ष को मात्र स्वर ही नहीं दिया बल्कि उसे एक ऐसा सातत्य प्रदान किया जो भावी पीढ़ियों के लिए सदैव प्रकाशित दीप-स्तंभ बन गया।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपनी आत्म-कथा 'बचित्र नाटक' में अपने पिता के अनोखे बलिदान का उल्लेख किया है--"उन्होंने तिलक और जनेव जैसे मूल्य-प्रतीकों के लिए अपना बलिदान दे दिया। दिल्लीश्वर के सम्मुख उन्होंने अपने जीवन को वृहत्तर मूल्यों की रक्षा के लिए एक ठीकरे की तरह फोड़ दिया। जैसा काम (श्री गुरु) तेग बहादर (साहिब) ने किया, वैसा तो और किसी ने नहीं किया था। उनके परलोक-गमन से सारा संसार चीत्कार कर उठा और देवता उनकी जय-जयकार करने लगे :

तिलक जंञू राखा प्रभ ता का ॥
कीनो बडो कलू महि साका ॥ . . .
ठीकरि फोरि दिलीसि सिरि प्रभ पुर कीया पयान ॥
तेग बहादर सी क्रिआ करी न किनहूं आन ॥
तेग बहादर के चलत भयो जगत को सोक ॥
है है है सभ जग भयो जै जै जै सुर लोक ॥

जिस उद्देश्य से श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने इस प्रकार के बलिदान को आमंत्रित किया था वह उद्देश्य भी सफल हुआ। जनसाधारण में इस बलिदान की तीव्र प्रतिक्रिया हुई। डॉ. गोकुलचंद नारंग के शब्दों में[२]--"समस्त उत्तरी भारत में उन्हें (गुरु तेग बहादर साहिब को) सभी जानते थे। राजस्थान के राजपूत राजा उनका अत्यंत आदर करते थे और पंजाब के कृषक सचमुच उनकी पूजा करते थे। सम्पूर्ण हिंदू जाति ने उनकी शहादत को अपने धर्म के नाम पर एक बलिदान समझा। समस्त पंजाब में क्रोध और प्रतिकार की आग भड़क उठी। माझा तथा मालवा के बलवान जाटों को केवल एक नेता की आवश्यकता थी, जिसकी पताका के नीचे लड़कर वे उस अपमान का बदला ले सकते जो उनके धर्म का किया गया था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी में उन्हें इस प्रकार का नेता दिखाई दिया।"

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की आत्माहुति से संप्रेरित जिस परंपरा ने जन्म लिया उसने भारतीय इतिहास में एक नये अध्याय को जोड़ा। उसने संतों, वीरों और बलिदानियों की ऐसी सगुंफित परंपरा का विकास किया कि ये तीनों ही गुण अलग-अलग चरित्रों के सूचक न रहकर एक ही चरित्र के अनुपूरक हो गए।

पद-टिप्पणियां :

१. He encourged the resistance of the Hindus of Kashmir to forcible conversion to Islam and openly defied the Emperor. Taken to Delhi, he was cast in prison and called upon to embrace Islam and on his refusal was tortured for five days and then beheaded on warrant from the Emperor. (History of Aurangzeb, page 313)

२. ट्रांसफारमेशन आफ सिखिज्म, पृष्ठ ११६

(पुस्तक "गुरु तेग बहादर : जीवन-दर्शन और विवेचन" से आभार सहित)



दार्शनिक व्यक्तित्व के धारक : श्री गुरु तेग बहादर साहिब

*-डॉ. मधुबाला**

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी का गहन अध्ययन करने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि वे मूल रूप से दार्शनिक हैं। इसका मुख्य कारण है कि उन्हें बचपन से लेकर बलिदान तक अनेक संघर्षों से गुजरना पड़ा। उन्होंने पटना साहिब, प्रयाग, ढाका, आसाम, उड़ीसा, पंजाब आदि स्थानों की यात्रा से नवीन एवं गहन अनुभव अर्जित किए। यही अनुभव कालांतर में बाणी के रूप में प्रस्फुटित हुए। दर्शन एक ऐसा विषय है कि आदि काल से ही मानव-मन का आकर्षण इस ओर रहा है। उसके मन में सदैव यह यक्ष प्रश्न बना हुआ है कि मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? आदि-आदि इसी बात का उत्तर ढूंढने के लिए तपस्वियों ने तप किया, साधकों ने साधना की, योगियों ने योग की सभी क्रियाओं को जीवन का अंग बनाया। जहां तक भी मनुष्य की दृष्टि, बुद्धि, गमन-शक्ति पहुंच सकी वहां तक उसका प्रयास जारी रहा। गुरु जी ने परमात्मा की स्थिति को मनुष्य-मन के भीतर ही माना है:

काहे रे बन खोजन जाई ॥
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥
(पन्ना ६८४)

"हे भाई! उस परम तत्व को, सर्वव्यापी को, सारे संसार के प्राणों के आधार को जंगल में ढूंढने जाने की कोई आवश्यकता नहीं है, वो प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान है, सदा निर्लेप है, तेरे अंग-संग रहता है।" उस परमात्मा की स्थिति इतनी अगम-अगोचर है कि इसकी खोज और साधना मानव का निशाना न बन सकी। खोज उसकी की जाती है जो वस्तु दूरातिदूर हो, अदृश्य हो, अज्ञात हो। जो वस्तु मनुष्य के पास हो उसे खोजना एक असफल प्रयास है। हम परमात्मा को आंखों से नहीं देख पाते, क्योंकि उसके लिए मन की आखों की ही आवश्यकता है। अनुभव की क्षमता का होना भी अनिवार्य है। जैसे पूज्य की सुगंध को, दर्पण के प्रतिबिंब को, जल की शीतलता को, अग्नि के तेज को पकड़ा नहीं जा सकता, केवल अनुभव किया जा सकता है, उसी प्रकार परमात्मा की स्थिति को भी जीवन में, जीवन की प्रत्येक सांस में महसूस किया जा सकता है :

पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई ॥
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई ॥
(पन्ना ६८४)

वह परमात्मा जो जीवात्मा में निवास करता है, जो चर-अचर, जड़-चेतन में निवास करता है, जो बाहर और भीतर की स्थिति के संबंध से अभिन्न है, वह एक ही है और वो सारे संसार को नियंत्रण में रखने वाला है :

--बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुर गिआनु बताई ॥ . . .
जब नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥ *(पन्ना ६८४)*
--घट ही भीतरि बसत निरंजनु ता को मरमु

**आई-१०९, गली नं: ५, मजीठिआ इन्कलेव, पटियाला-१४७००५*

न जाना ॥ *(पन्ना ६३३)*
--साधो इहु तनु मिथिआ जानउ ॥
या भीतरि जो रामु बसतु है साचो ताहि पछानो ॥ *(पन्ना ११८६)*
--घट घट मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि ॥ *(पन्ना १४२७)*

जो प्राणी आठों पहर परमात्मा का नाम-स्मरण करता है, श्वास-श्वास में उसका चिंतन करता है, उसके मन की पवित्रता उसे बुराई की ओर नहीं जाने देती। वह परमात्मा से मिलकर तदाकार हो जाता है, उसी का स्वरूप बन जाता है। परमात्मा का नाम-चिंतन उसके मन में सदैव चलता रहता है :

जो प्रानी निसि दिनु भजै रूप राम तिह जानु ॥
हरि जन हरि अंतरु नही नानक साची मानु ॥
(पन्ना १४२८)

सृष्टि क्या है? इसका अस्तित्व क्या है? इसे किस रूप में जाना जा सकता है? इसकी वास्तविकता क्या है? इन सभी प्रश्नों का उत्तर श्री गुरु तेग बहादर साहिब की बाणी में मिलता है :

जग रचना सभ झूठ है जानि लेहु रे मीत ॥
कहि नानक थिरु ना रहै जिउ बालू की भीति ॥ . . .
चिंता ता की कीजीऐ जो अनहोनी होइ ॥
इहु मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ ॥
(पन्ना १४२९)
--साधो रचना राम बनाई ॥
इकि बिनसै इक असथिरु मानै अचरजु लखिओ न जाई ॥ *(पन्ना २१९)*
--इहु जगु है संपति सुपने की देखि कहा ऐडानो ॥ *(पन्ना ११८६)*

अर्थात् यह संसार मिथ्या है, झूठ है, अस्थिर है और रेत की दीवार की तरह ढह जाने वाला है, अत: मनुष्य संसार में प्रीति न रखे। संसार का मार्ग है आवागमन। जन्म-मृत्यु का चक्कर निरंतर चलायमान है। यह संसार स्वप्न के समान है। जैसे आंख खुलने पर स्वप्न की वास्तविकता प्रकट हो जाती है उसी प्रकार मनुष्य-मन में संसार-रूपी स्वप्न की नि:सारता ज्ञान प्रकट होने पर स्वत: सिद्ध हो जाती है। यह संसार एक भ्रम है, संदेह है।

मनुष्य माया के वशीभूत हुआ सदैव भ्रमित रहता है, माया में उलझा रहता है, माया से ठगा जाता है, माया के हाथों बिक जाता है :

साधो इहु जगु भरम भुलाना ॥
राम नाम का सिमरनु छोडिआ
माइआ हाथि बिकाना ॥ *(पन्ना ६८४)*

माया के मोह में मनुष्य बावरा हुआ घूमता है, उसे ज्ञान की सूझ नहीं होती, परमात्मा का नाम उसे अच्छा नहीं लगता। महा लोभ में फंसा व्यक्ति-मन उससे पृथक होकर नहीं सोच सकता। फलस्वरूप वह झूठे शरीर को ही सच मान लेता है :

झूठा तनु साचा करि मानिओ जिउ सुपना रैनाई ॥ *(पन्ना २१९)*

गुरु जी ने मनुष्य-जीवन में त्याग की आवश्यकता पर बल दिया है। माया में लिप्त रहने वाला मानव व्यर्थ जीवन ही बिताता है। माया रूपी परदा तब तक दूर नहीं होता जब तक वह परमात्मा की शरण में नहीं जाता :

मगन रहिओ माइआ मै निस दिनि छुटी न मन की काई ॥
कहि नानक अब नाहि अनत गति बिनु हरि की सरनाई ॥ *(पन्ना ७१८)*

मानव-मन का अहंकार की परदा है, आवरण है। कोई है जिसने परमात्मा के स्वरूप को ढका हुआ है। अत: अहंकार के साथ-साथ काम, क्रोध और दुर्जन की संगति से भी दूर

रहना चाहिए तभी परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है :

साधो मन का मानु तिआगउ ॥
कामु क्रोधु संगति दुरजन की ता ते अहिनिसि भागउ ॥ *(पन्ना २१९)*

इच्छाएं बहुत बलवती हैं, चंचल हैं, इसी लिए मन दिन-रात विषयों की तरफ भागता है। बहुत यत्नपूर्वक जीवन बिताने पर भी यह वश में नहीं रहता :

माई मनु मेरो बसि नाहि ॥
निस बासुर बिखिअन कउ धावत किहि बिधि रोकउ ताहि ॥ *(पन्ना ६३२)*

मन को वश में रखने का मात्र एक उपाय है--'हरि-नाम-धन की प्राप्ति', जिसको पा लेने से सभी तृष्णाएं मिट जाती हैं :

माई मै धनु पाइओ हरि नामु ॥
मनु मेरो धावन ते छूटिओ करि बैठो बिसरामु ॥ *(पन्ना ११८६)*

मनुष्य के लिए यही उपयोगी है कि वह परमात्मा का नाम-सिमरन करे, क्योंकि संसार की प्रत्येक वस्तु नाशवान है। यह शरीर भगवद्-भजन के लिए मिला है न कि सांसारिक भोगों का उपभोग करने के लिए :

--फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही ॥
नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही ॥ *(पन्ना ६३१)*

--दुरलभ देह पाइ मानस की बिरथा जनमु सिरावै ॥ *(पन्ना २२०)*

--साधो गोबिंद के गुन गावउ ॥
मानस जनमु अमोलकु पाइओ बिरथा काहि गवावउ ॥ *(पन्ना २१९)*

निष्कर्षतः श्री गुरु तेग बहादर साहिब द्वारा अभिव्यक्त दार्शनिक विचारधारा इतनी गहन, विशाल और सारभूत है कि इस बाणी का गहन-अध्ययन साधकों, जिज्ञासुओं और ज्ञान-पिपासुओं के लिए अथाह अमृत-स्रोत है।



कविता

श्री गुरु तेग बहादर साहिब

धर्म में संलिप्त और अंधकार से जो कोसों दूर।
वे हैं नवम पातशाह गुरु तेग बहादर हुजूर!
धर्म-हित में थी ज़िंदगी और धर्म-हित में था बलिदान।
पीड़ितों की कर सुरक्षा, कर्म कर दिया महान।
जरा भी न हटे पीछे, सामने औरंगजेब था।
वो था दंभी, दुष्ट, कायर, करता जो फरेब था।
पूज्य गुरु से कह रहा, मजहब हमारा स्वीकार लो!
अन्यथा गर्दन पे अपनी, तेग का प्रहार लो!
कुछ करामातें दिखाओ, तो मैं बख्शूं प्राण को।
किंतु गुरु जी ने चुना, बलिदानमय निर्वाण को।
आओ! हम सब दें, गुरु साहिब को श्रद्धांजलि।
हम सभी के हृदय में, गुरु-नाम की ज्योति जली।
धन्य हो गुरदेव, श्री गुरु तेग बहादर धन्य हो!
आपकी श्रीचरण छाया में, जगत प्रसन्न हो!



-श्री संजय बाजपेयी रोहितास, C/o जनाब हुसैनी मियां, स्टेशन रोड, कछौना (बालामऊ), जिला हरदोई (उ. प्र.)

नवम गुरु जी की निर्भयता पर आधारित विचारधारा की सदीवी प्रासंगिकता

*-डॉ निर्मल कौशिक**

भारतीय संस्कृति के संरक्षक एवं पोषक श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने मानव जीवन के इतिहास में एक ऐसा अद्वितीय कार्य किया है जिसका उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है। उन्होंने अपने युग के शासक वर्ग की नृशंस एवं मानवता विरोधी नीतियों को कुचलने के लिए आत्म-बलिदान तक दे डाला। यह कार्य इतना सहज नहीं है। कोई ब्रह्मज्ञानी साधक ही इस स्थिति को पा सकता है। जो मनुष्य 'पर में निज' को देखता है वह मानवता के शिखर को पा लेता है। उसके लिए पूरा विश्व अपना होता है। वह लोक-प्रतिनिधि बन कर अकेले ही दुष्वृत्तियों से जूझ पड़ता है और सत्य सदैव उसके पक्ष में होता है। गुरु-शिष्य परंपरा के नवम गुरु श्री गुरु तेग बहादर साहिब मानवता की साकार प्रतिभा थे। उनमें ईश्वरीय निष्ठा के साथ समता-भाव, करुणा, प्रेम, सहानुभूति, त्याग और बलिदान जैसे अनेक मानवीय गुण विद्यमान थे। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के गुणों को समन्वित करते हुए डॉ शमीर सिंघ कहते हैं, "शस्त्र और शास्त्र का, संघर्ष और वैराग्य का, लौकिकता और आलौकिकता का, रणनीति और आचार-नीति का, राजनीति और कूटनीति का, संग्रह और त्याग का, आत्मलीनता और विश्व के प्रति समर्पण का ऐसा संयोग मध्ययुगीन साहित्य एवं इतिहास में विरला है। यही कारण है कि श्री गुरु तेग बहादर साहिब 'गुरु' के गौरव और 'तेग' की बहादुरी की रक्षा एक साथ करने में सफल सिद्ध हुए हैं।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का युग मानव मूल्यों के ह्रास का युग था। इस समय औरंगजेब का शासन था। उसने हिंदू संस्कृति को समूल नष्ट करने की ठान ली थी। उसने बड़े-बड़े शिक्षा-केंद्रों, मठों, मंदिरों को नष्ट कर दिया; लाखों निर्दोष लोगों को मौत के घाट उतार दिया। उस समय के कशमीर के गवर्नर इफ्तिखार खां के अत्याचारों से पीड़ित कुछ ब्राह्मणों ने श्री अनंदपुर साहिब में आकर गुरु जी को अपनी व्यथा सुनाई और रक्षा के लिए अनुनय-विनय की। पीड़ित ब्राह्मणों की व्यथा सुनकर गुरु जी गहरे चिंतन में लीन हो गए। गुरु जी ने जाना कि ये लोग भय के मारे न तो जुल्म का डटकर विरोध कर पा रहे हैं तथा न ही विरोध में अपने आप को कुर्बान तक करने को तैयार हैं।

गुरु जी नश्वर शरीर के रहस्य को भली-भांति समझते थे। वे आत्मा की अमरता को पहचानते थे इसी लिए वे निर्भीक थे; इसी लिए वे समत्व-भाव से जीवन-यापन करने पर अधिक बल देते थे। उन्होंने सुख-दुख, निंदा-स्तुति, लाभ-हानि, मान-अपमान आदि को समदृष्टि से देखने की प्रेरणा दी है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब फरमान करते हैं :

उसतति निंदा दोऊ परहरि हरि कीरति उरि आनो ॥
जन नानक सभ ही मै पूरन एक पुरख

**१६३, आदर्श नगर, ओल्ड कैंट रोड, फरीदकोट-१५१२०३, फोन : ०१६३९-२६३०१७*

भगवानो ॥ *(पन्ना ११८६)*

इस नश्वर संसार में बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी स्थाई रूप से यहां नहीं रह सके। यहां कुछ भी स्थिर नहीं है। यह संसार एक स्वप्न के समान है :

रामु गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवारु ॥
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारु ॥
(पन्ना १४२९)

गुरु जी के इस सांसारिक नश्वरता के संकल्प ने ही उन्हें शारीरिक मोह-त्याग की ओर प्रेरित किया। उनकी ईश्वरीय निष्ठा, आत्मा की अमरता और देह की नश्वरता ही उन्हें निर्भीक बलिदानी बनाने में सहायक सिद्ध हुई।

विपत्ति आने पर भी धैर्य में रहना गुरु जी के महान व्यक्तित्व का अनन्य गुण है। वे मुसीबत में अडिग और अविचल रहते थे। दिल्ली में उनकी आंखों के सामने ही भाई दिआला जी को खौलते पानी की देग में उबाला गया, भाई मतीदास जी को आरे से चीरा गया, भाई सतीदास जी को रुई में लपेट कर जला दिया गया, मगर वे विचलित नहीं हुए, बल्कि उनके अंदर आत्म-बलिदान की भावना और भी तीव्र हुई। विपत्ति के समय डगमगाने वाले व्यक्ति कभी कोई निर्णय नहीं ले सकते। गुरु जी के मन की प्रबलता को लालच दुर्बल नहीं बना सका। औरंगजेब ने उनके समक्ष तीन शर्ते रखी थीं, जिनका उल्लेख भाई संतोख सिंघ ने 'श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' में इस प्रकार किया है :

शरा मानि, कै अजमत दैन।
किधों म्रितू अपनी करि लैन।
इन तीनहुं महिं लखहु जु नीकी।
हिय के बीच करहु सो ठीकी ॥३३॥ (रास १२:६४)

"इसलाम धर्म कबूल करना, कोई करामात दिखाना अथवा मृत्यु का आलिंगन।"

गुरु जी ने जुल्म के सामने झुकने से साफ इंकार कर दिया। उन्होंने सहिष्णुता और धीरता को अपने जीवन में एक अलंकार की भांति संजोया। जो किसी दुष्कर्म में अपने आप को प्रवृत्त नहीं करते, वास्तव में धैर्यवान पुरुष वही होते हैं। गुरु जी ने धर्म को छोड़ने की अपेक्षा मृत्यु को गले लगाना ही श्रेयस्कर समझा। उनका कहना था कि मनुष्य अपने धर्म का आचरण करे।

गुरु जी ने भय-युक्त जीवन को निकृष्ट माना है। उन्होंने मनुष्य को निर्भीक जीवन जीने की प्रेरणा दी है। उनकी बाणी में सब को अपने जैसा समझने और अपना बनाने की प्रेरणा है। जब सभी अपनत्व-भाव से अपने होंगे, कोई दूसरा होगा ही नहीं तो भय किससे होगा? गुरु जी फरमान करते हैं :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥ *(पन्ना १४२७)*

न किसी को भयभीत करो और न ही भयभीत होवो। मरने के भय से ही मारने की वृत्ति जन्म लेती है। अगर देह की नश्वरता और आत्मा की अमरता का ज्ञान हो तो फिर मरने का भय स्वत: नष्ट हो जाता है। आज शस्त्रों की दौड़ भी भय का ही परिणाम है। अपने भय को मिटाने के लिए हम दूसरों को भयभीत करते हैं जो मूलत: गलत नीति है। गुरु जी ने भय के निराकरण का मात्र एक ही उपाय बताया है और वह है हरि का सिमरन। वास्तव में मोक्ष भी अभय पद ही है। यही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है। इस अभय पद की प्राप्ति भी उसी महान आत्मा को हो सकती

है जिसने आत्म-तत्व को जान लिया हो। गुरु जी ने सतत साधना से सृष्टि और सृष्टा के रहस्य को पा लिया था। वे जानते थे कि *"जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु कै कालि ॥"* उन्होंने अभय पद प्रदान करने वाले उस प्रभु के नाम को अपना लिया था। इसी नाम का आधार लेकर वे औरंगजेब जैसे अत्याचारी के साथ निहत्थे ही जूझ पड़े। उनके दृढ़ निश्चय और आस्था के सामने औरंगजेब का जब्र-जुल्म फीका पड़ गया, वो उन्हें झुका नहीं सका। गुरु जी ने न तो धर्म परिवर्तन किया और न ही कोई करामात दिखाई। वे अंतरयामी थे। उन्होंने ईश्वर के 'हुक्म' का साक्षात्कार कर लिया था। उन्होंने लोभ-मोह, सुख-दुख, मान-अपमान, हर्ष-विषाद को समभाव जानकर, इनसे ऊपर उठकर अभय पद पा लिया था। वे किसी से यहां तक कि मृत्यु से भी भयभीत नहीं हुए और न ही किसी को भयभीत किया। वे चाहते तो अपनी आध्यात्मिक चेतना के बल पर कई करामातें दिखा कर भयभीत कर सकते थे, मगर गुरु जी का दृष्टिकोण ही अलग था। वे न तो स्वयं किसी से डरते थे और न ही किसी को डराने में विश्वास करते थे। वे शक्ति का प्रयोग किसी सार्थक कार्य के लिए करना उपयोगी मानते थे। अपनी शक्ति को उन्होंने समूचे राष्ट्र की रक्षा के लिए बलिदान देकर सार्थक किया।

आज वैज्ञानिक प्रगति के इस युग में मनुष्य आत्म-रक्षा हेतु हिंसावादी हो गया है। कैसी विडंबना है कि आज विश्व-शांति की स्थापना युद्धों के माध्यम से की जा रही है! एक देश दूसरे देश को धमका रहा है। सारा विश्व भयभीत हो रहा है। परमाणु दौड़ निरंतर बढ़ रही है। वास्तव में देखा जाए तो यह सब मानव की अपनी दुर्बलताओं का ही दुष्परिणाम है। मानव अपनी दुर्बलता को छुपाने के लिए दूसरे को भयभीत करना चाहता है। वह अपनी शक्ति का दुरुपयोग करके दूसरे को नष्ट कर देना चाहता है ताकि उसका विरोध करने वाला कोई न हो। वह अपने 'अहम्' के बूते पर दूसरे के अस्तित्व को मिटा देना चाहता है। मगर वो यह नहीं समझता कि उसका भी तो अंत होना है। मृत्यु तो निश्चित है। अगर आज पूरा विश्व गुरु जी के बताए मार्ग पर चले, न किसी से डरे और न ही किसी को डराए, तो आज विश्व-शांति का सपना पल भर में ही साकार हो सकता है। मनुष्य अपने डर को दूर कैसे करे, इसके लिए गुरु जी ने एक ही मार्ग बताया है :

आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा ॥
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा ॥ *(पन्ना ६३३)*

साधारणत: यह काम हर मनुष्य के वश की बात नहीं है। इसके लिए आस्था और निष्ठा की आवश्यकता होती है, मन की चंचलता को नियंत्रित करना पड़ता है, इसी लिए गुरु जी अपने मन की शिकायत करते हुए कहते हैं :

मन रे कउनु कुमति तै लीनी ॥ (पन्ना ६३१)

जो सब प्राणियों में ईश्वर का स्वरूप देखता है वह उन्हें कैसे डरा सकता है? वह तो उनके आगे नत्मस्तक होता है। यही भावना मानव को महामानव बना सकती है।

मृत्यु से तनिक भी भय न रखने वाले श्री गुरु तेग बहादर साहिब का समूचा जीवन एक साधक का जीवन रहा है। उन्हें कोई भी लौकिक समृद्धि या आकर्षण साधना-पथ से विचलित नहीं कर सका। उनकी बाणी उनकी अनुभूति पर आधारित है। वे सांसारिकता के

मोह-पाश से दूर रहने का संदेश देते हैं। उनकी कथनी और करनी समान है। उन्होंने जो कुछ कहा, कर दिखाया। उनका व्यक्तित्व मानव जीवन के सभी बाधक तत्त्वों से रहित है। उन्होंने मानव को काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार आदि विकारों से दूर रह कर ईश्वर की आराधना करने पर बल दिया है। वे जानते थे कि जब तक मोह-माया रूपी अज्ञान का अंधकार मन पर छाया रहेगा तब तक प्रभु के दर्शन नहीं हो सकते :

माई मै किहि बिधि लखउ गुसाई ॥
महा मोह अगिआनि तिमरि मो मनु रहिओ उरझाई ॥ (पन्ना ६३२)

अगर मन शुद्ध हो तो प्रभु-कृपा से मनुष्य उन सभी सद्गुणों को पा लेता है जो मानवता के लिए कल्याणकारी होते हैं। मानव सत्य, प्रेम, दया, त्याग, क्षमा और उदारता जैसे गुणों को धारण कर उदात हो जाता है। वह सत्य को पाने में भी सक्षम हो जाता है। इतना सक्षम कि दूसरों के बहकावे में आ ही नहीं सकता। किसी भी प्रकार का लोभ या भय उसे विचलित नहीं कर सकता। साधक ऐसी अवस्था पा लेता है जिसमें वो न तो अपनी स्तुति सुनना चाहता है और न ही किसी की निंदा करना चाहता है। वो सुख में हर्षित नहीं होता और न ही दुख में शोकाकुल। वह लोहे और सोने को समान समझता है। वह शत्रु और मित्र को भी समदृष्टि से देखता है :

ब्रहम गिआनी कै मित्र सत्रु समानि ॥
ब्रहम गिआनी कै नाही अभिमान ॥
(पन्ना २७२)

सांसारिकता की अत्याधिक झुकाव वाली स्थिति में जब तक प्राणी इस संसार में रहता है उसे मृत्यु का भय बना रहता है। वह दूसरे शक्तिशाली जीवों से इसी लिए भयभीत होता रहता है कि वे उसे मार न दें। उसके भयभीत होने का कारण उसकी अपनी दुर्बलता है। दूसरी ओर शक्तिशाली जीव अपनी शक्ति से दूसरों को मारना गौरव समझते हैं। इसी भावना से हिंसा की प्रवृत्ति बढ़ती है। अगर इस भावना को प्रभु-भक्ति द्वारा नियंत्रित कर लिया जाए और अपनी शक्ति को दूसरों को मारने की अपेक्षा उनकी रक्षा के लिए लगा दिया जाए तो पूरा विश्व एक कुटुंब की तरह लगेगा, फिर तो छोटे-बड़े सब एक हो जाएंगे, अस्त्रों-शस्त्रों की दौड़ स्वत: समाप्त हो जाएगी। तब जो धन सुरक्षा के नाम पर अपव्यय हो रहा है वही निर्धनों के भरण-पोषण के काम आ सकेगा। यह तभी संभव है अगर हम श्री गुरु तेग बहादर साहिब के बताए अभय पद-प्राप्ति के मार्ग का अनुसरण करेंगे। आज के संतप्त हृदयी मानव को गुरु जी का अमर संदेश ही संबल प्रदान कर सकता है। आज हिंसा और द्वेष को समाप्त कर विश्व-शांति की स्थापना का यही एक मात्र उपाय है जो गुरु जी ने आज से त्रिशती से भी अधिक वर्षों पूर्व लक्ष्य-भ्रष्ट मानव को बताया था। उनका भय-निवृत्ति का यह नुस्खा आज भी उतना ही अचूक है जितना उनके अपने युग में था। नि:संदेह वे युगनायक थे। 



हिंद की चादर : श्री गुरु तेग बहादर साहिब

*-स. गुरप्रीत सिंघ**

नवम पातशाह साहिब श्री गुरु तेग बहादर साहिब का जन्म श्री अमृतसर के 'गुरू के महल' नामक स्थान पर ५ वैसाख, संवत् १६७८ तद्नुसार १ अप्रैल, १६२१ ई को छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के घर माता नानकी जी की पवित्र कोख से हुआ। गुरु जी बाल्यावस्था से ही संत-स्वरूप, गहन विचारवान, उदारचित्त, बहादुर तथा निर्भय स्वभाव के थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा मीरी-पीरी के मालिक गुरु-पिता श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की निगरानी तले हुई। तत्कालीन वक्त की जरूरत महसूस करते हुए आपको गुरबाणी एवं धर्म-ग्रंथों के साथ-साथ शस्त्रों तथा घुड़सवारी आदि की शिक्षा भी दी गई। जल्द ही गुरु जी महान विद्वान, शूरवीर तथा शस्त्रधारी शख्सियत बनकर उभरे। १६३४ ई में गुरु जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा मुगलों के विरुद्ध लड़ी गई करतारपुर की जंग में तेग के जौहर दिखाये और सैंकड़ों शत्रुओं के साथ लोहा लेते हुए स्वयं को 'तेग का धनी' साबित किया।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब का विवाह करतारपुर (जलंधर) के निवासी श्री लालचंद जी की सुपुत्री सुश्री गुजरी जी के साथ १५ आश्विन, संवत् १६८९ (१६३२ ई) को हुआ, जिनकी पवित्र कोख से १६६६ ई को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का जन्म हुआ। श्री गुरु तेग बहादर साहिब का निजी एवं घरेलू जीवन बहुत ही सादा था। आपका मन संसार के लोभ, मोह, रसों-कसों आदि से मुक्त था। कुछ समय बाद गुरु जी विशेष विकट पारिवारिक परिस्थितियों के कारण अपने माता जी तथा सुपत्नी सहित अपनी ननिहाल गांव बकाला, जिला श्री अमृतसर में आ गए। यहां पर गुरु जी शांतमयी एवं स्थिर मानसिक-आत्मिक अवस्था वाला जीवन-यापन करते हुए जप, तप एवं सिमरन करते रहते। आप जी भली-भांति जानते थे कि हाकिमों की धक्केशाही, जुल्म तथा जब्र को मात देने के लिए कुर्बानी की आवश्यकता पड़ेगी और यह कुर्बानी उन्होंने प्रभु-भक्ति में रमकर गुरु-घर के नियमों पर दृढ़ रहते हुए दी।

उधर जब दिल्ली में संवत् १७२१ में श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ज्योति-जोत समाने के निकटस्थ थे तो संगत ने पूछा, "गुरु जी! आपके बाद हमारा गुरु कौन होगा?" गुरु जी ने कहा, "बाबा बकाले!" यह पावन फरमान बिलकुल सरल एवं स्पष्ट था कि जिस महापुरुष ने पंथ की बागडोर संभालनी है वे हमारे 'बाबा' (दादा) हैं और 'बकाला' गांव में रहते हैं। दूसरी ओर धीरमल जैसे गुरगद्दी के चाहवान बकाला में जाकर गद्दी लगा कर बैठ गए। उन्होंने अपने आप को 'सोढी बाबा' कहलाना शुरू कर दिया और गुरु-घर के नाम पर कार-भेंटा एकत्र करने लग गए। त्याग की मूर्ति श्री गुरु तेग बहादर साहिब एकांत में अडोल एवं शांतचित्त बैठे भक्ति में लीन रहे।

कुछ समय के पश्चात् भाई मक्खण शाह अपनी मन्नत पूरी होने पर बकाला में गुरु-दर्शन एवं शुक्राना करने गया। गुरु-घर का सच्चा श्रद्धालु सिक्ख इतने सारे 'गुरु' देखकर चकित रह गया। उसने असल व वास्तविक गुरु पहचानने के लिए दो-दो मोहरें सबके आगे रख दीं। ये नकली गुरु दो-दो मोहरें पाकर अति प्रसन्न थे। सिक्ख को पता चल गया कि ये सच्चे गुरु नहीं हैं। फिर

**प्रूफ रीडर, गुरमति ज्ञान। मो : ९८७८५५८८५१*

भाई मक्खण शाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास आया और उसने दो मोहरें रखकर माथा टेका। गुरु जी ने कहा, "भाई सिक्खा! हजार में से सिर्फ दो ही दे रहे हो!" यह सुनकर भाई मक्खण शाह खुशी से गदगद हो गया, छत पर चढ़ ऊंचे स्वर में कहने लगा, "गुरु लाधो रे! गुरु लाधो रे!" अर्थात् "मैंने (सच्चा) गुरु ढूंढ लिया है।" संगत सच्चे गुरु के दर्शनों के लिए उमड़ पड़ी। इस प्रकार गुरु जी नवें पातशाह के रूप में गुरगद्दी पर विराजमान हुए।

यह सब देखकर धीरमल के मन में ईर्ष्या रूपी अग्नि दहकने लगी। उसने शींहे मसंद तथा अन्य मसंदों को उकसा कर गुरु जी पर हमला करवा दिया। उसने गुरु जी पर बंदूक से गोली चलवा दी। गुरु जी जख्मी हो गए, अपितु शांतचित्त बैठे रहे। धीरमल गुरु-घर से धन-दौलत एवं श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पावन सरूप लेकर भाग गया। इस घटनाक्रम का जब भाई मक्खण शाह को पता चला तो वो उन्हें सोधकर लूटा हुआ सामान तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पावन सरूप वापिस ले आया।

तत्पश्चात श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने विषय-विकारों, आडंबरों आदि भ्रम-जाल में फंसे लोगों को बाहर निकालने एवं धर्म प्रचार करने के उद्देश्य से प्रचार-यात्राएं करनी आरंभ कीं। इन्हीं यात्राओं के दौरान जब आप ढाका की तरफ प्रचार कर रहे थे तभी पटना साहिब में माता गुजरी जी की पावन कोख से बाल गोबिंद राय जी के जन्म का शुभ समाचार मिला। उस समय औरंगजेब बादशाह का राज्य था जो बहुत ही दुष्ट, अत्याचारी, कट्टरपंथी हाकिम था। उसने तख्त पर बैठते ही ऐलान कर दिया कि देश का राज्य-प्रबंध इसलामी ढंग एवं इसलामी कानून के अनुसार हो। वो हिंदुओं को जबरन मुसलमान बनाने लगा। वो मंदिरों, धर्मशालाओं आदि को तुड़वाकर उनकी जगह मस्जिदों का निर्माण कराने लगा। हिंदुओं को सरकारी नौकरियों से निकाल दिया गया। किसी न किसी बहाने पकड़कर उन्हें कहा जाता कि यदि जान बचानी है तो मुसलमान बन जाओ। जनता पर आपत्तियों का मानो पहाड़ टूट पड़ा हो। यह सख्ती विशेषत: हिंदुओं पर ज्यादा की गई। इसके अतिरिक्त मुसलमानों को भारी छूट एवं सुविधाएं दी गईं। कशमीरी पंडितों ने उसकी दुष्ट नीति से तंग आकर माखोवाल (वर्तमान श्री अनंदपुर साहिब) में श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास अपनी रक्षा हेतु जा फरियाद की। गुरु जी ने कहा कि "भयभीत लोगों में नई जान भरने तथा हाकिमों के जब्र व जुल्म का मुकाबला करने के लिए किसी महाबली, उत्तम पुरुष की जरूरत है जो अपने प्राणों की कुर्बानी देकर इन्हें कुर्बान होने की जाच सिखाए।" इतने में बाल श्री (गुरु) गोबिंद राय जी बोले, "पिता जी! इस दुनिया में आपसे बढ़कर महाबली उत्तम, पुरुष अन्य कौन होगा?" यह सुनकर गुरु जी ने कशमीरी पंडितों को कह दिया कि "जाओ! जाकर सूबेदार से कह दो कि अगर वे हमें (श्री गुरु तेग बहादर साहिब) मुसलमान बना लें तो समस्त हिंदू इसलाम कबूल कर लेंगे।" कशमीरी पंडितों ने गुरु जी द्वारा कही बात कशमीर जाकर सूबेदार शेर अफगान को कही। उसने शीघ्र ही बादशाह औरंगजेब के कान भर दिये। यह बात सुनते ही औरंगजेब आग बबूला हो गया। उसने तत्काल ही गुरु जी को गिरफ्तार करके दिल्ली लाने का हुक्म जारी कर दिया। उस समय के दौरान गुरु जी कीरतपुर, रोपड़, समाणा, करनाल, जींद आदि स्थानों की प्रचार-यात्रा करते हुए लोगों में जागृति पैदा करते, जुल्म एवं जब्र के खातिमे के लिए उत्साह भरते तथा सत्य का उपदेश देते हुए आगरा जा पहुंचे। यहां पर से आपने अपने सभी साथी सिक्खों को वापिस लौटा दिया तथा अपने साथ मात्र पांच सिक्ख ही रखे। यहीं पर ही गुरु जी के आगरा में होने की खबर हाकिमों तक पहुंच गई। उन्होंने तुरंत गुरु जी को

पांच सिक्खों सहित गिरफ्तार कर लिया। गुरु जी और उनके सिक्खों को सैंकड़ों सैनिकों की कड़ी निगरानी तले दिल्ली ले जाया गया। फिर गुरु जी को काजी एवं हाकिमों ने कहा कि "बादशाह की तीव्र इच्छा है कि आप इसलाम कबूल करें। इससे आप इसलाम के बड़े पीर बन जायेंगे। आपको सांसारिक सुख, ऐश्वर्य, यश, धन, कीर्ति सब कुछ मिलेगा।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "मेरे लिए सुख, ऐश्वर्य, यश, कीर्ति कोई भी वस्तु ऐसी अमूल्य निधि नहीं है जिसके लिए मैं अपने धर्म से बेधर्म हो जाऊं। यदि तुम्हें अपना धर्म प्यारा है तो हमें भी अपना धर्म प्यारा है। किसी को जबरन अपना धर्म कबूल करवाना धक्केशाही है, बेइंसाफी है, अत्याचार है, परमात्मा की दृष्टि में घोर अन्याय है।" यह सुनकर काजी एवं हाकिम निरुत्तर हो गये और चले गये। हाकिमों द्वारा गुरु जी और उनके सिक्खों को कई प्रकार के लालच एवं शारीरिक यातनायें दी जाने लगीं। श्री गुरु तेग बहादर साहिब शरीर को नाशवान तथा सुख-दुख को समान समझने वाले एवं सांसारिक विषय-विकारों से निर्लिप्त रहने वाले थे। वे इस दुख भरी स्थिति में भी निर्भय एवं अडोल रहे। फिर हाकिमों ने अपनी घिनौनी मंशा में आशा की किरण नजर न आती देखकर सोचा कि क्यों न गुरु जी के साथ आये उनके सिक्खों को असहनीय शारीरिक कष्ट दिये जायें, जिसे देखकर गुरु जी स्वयं ही इसलाम कबूल कर लें! हाकिमों ने पहले भाई मतीदास जी को आरे से चीर दिया, फिर भाई सतीदास जी को रुई में लपेट कर जला दिया गया तथा बाद में भाई दिआला जी को पानी भरी उबलती देग में बैठा कर शहीद कर दिया। गुरु जी ने अपने सिक्खों को स्नेह भरा आशीर्वाद दिया। वे अकाल पुरख के आंचल में जा विराजे। इतना होने के बावजूद भी गुरु जी में कोई परिवर्तन न आया देखकर बादशाह के हुक्म अनुसार मौलवी, काजी एवं हाकिमों ने गुरु जी के समक्ष तीन शर्तें रखीं, "पहला, इसलाम कबूल कर लो; दूसरा, कोई करामात करके दिखाओ; तीसरा, मृत्यु को स्वीकार करो।" गुरु जी ने कहा, "मैं अपना धर्म कदापि नहीं छोड़ूंगा और न ही कोई करामात करके दिखाऊंगा। मैं तुम्हारी तीसरी शर्त कबूल करता हूं। मुझे मृत्यु स्वीकार है।" गुरु जी को शहीद करने की तैयारियां शुरू कर दी गईं। गुरु जी को ११ मार्गशीर्ष, सं. १७३२ तद्नुसार ११ नवंबर, १६७५ ई को चांदनी चौंक, दिल्ली में लाया गया। गुरु जी ने जपु जी साहिब की पावन बाणी का पाठ करने के उपरांत परमात्मा को शीश निवाया। समाणा शहर के दरिंदे हाकिम सैयद जलालुद्दीन जल्लाद ने तलवार के वार से गुरु जी का शीश धड़ से अलग कर उन्हें शहीद कर दिया। यह दुखद वृत्तांत देख रहे लाखों लोगों की आंखों से आंसुओं की सरिता बह रही थी। सख्त पहरेदारी होने के बावजूद भी बहादुर कौम के बहादुर सिक्ख भाई जैता जी ने पहरेदारों से आंख चुराकर गुरु जी का पावन शीश उठा लिया और कपड़े में लपेटकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पास श्री अनंदपुर साहिब ले गया। गुरु जी का धड़ भाई लक्खीशाह बड़ी होशियारी से बैलगाड़ी पर लाद कर अपने घर ले आया और धड़ का अंतिम संस्कार करने हेतु अपने घर को आग लगा दी।

इस प्रकार श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने हिंदू धर्म की रक्षा हेतु, देश को दुष्टों के चंगुल से छुड़ाने हेतु जनमानस में विरोध करने की भावना भर कर, कुर्बानियों के लिए तैयार कर और मुगल हकूमत को उनके नापाक इरादों में असफल करते हुए श्रेष्ठ कुर्बानी दी। इस तरह आप जी सही अर्थों में 'हिंद की चादर' बने।

आप जी द्वारा रचित बाणी के १५ रागों में ११६ शबद (सलोकों सहित) श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित हैं।



गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

-डॉ. कुलदीप सिंघ हउरा

अंग्रेजी साम्राज्य ने अपने साम्राज्यी प्रलोभनों की पूर्ति हेतु हिंदोस्तान को मार्शल तथा गैर-मार्शल वर्गों में बांट रखा था। पंजाब मार्शल वर्ग में प्रथम स्थान पर माना जाता था। यहां के सिक्खों एवं मुसलमानों को भर्ती के समय प्राथमिकता दी जाती थी तथा अंग्रेज हाकिम सिक्खों को खास तरजीह देते थे। रौलट रिपोर्ट या हंटर कमेटी की रिपोर्टें पढ़ने पर यह सच्चाई खुलकर सामने आ जाती है।

अपनी इस रणनीति के उद्देश्य की पूर्ति के लिए पंजाब को आर्थिक, धार्मिक, शैक्षणिक तथा सामाजिक, हर रूप से पछड़ा रखा जा रहा था। सरकार की नीति यह भी थी कि सिक्खों को कर्जे के भार तले दबा कर रखा जाये, उनकी उपज का मूल्य कम से कम दिया जाये, उनकी आवश्यकता वाली वस्तुओं के दाम ऊंचे रखे जायें, जिससे वे तंग आकर भर्ती होने के लिए विवश हो जायें। सरकार की नीति यह भी थी कि पंजाब में बसने वाली कौमों--सिक्ख, मुसलमान तथा हिंदुओं की पुजारी श्रेणी, जो दुराचार तथा कुकर्म का कार्य करके अंग्रेजी राज्य की मजबूती के लिए साजिशें करती है, को खुली छूट दी जाये कि जो भी ढंग अंग्रेजों के राज्य की बढ़ोत्तरी के लिए इस्तेमाल करना चाहो वो करो।

जहां तक सिक्ख धर्म तथा गुरुद्वारों का संबंध था, अंग्रेज हाकिमों की नीति यह थी कि सिक्ख धर्म एवं गुरुद्वारों के प्रबंध में दखल दिया जाये ताकि सिक्ख हमारे प्रभाव तले रहें तथा उनको अंग्रेजी राज्य की मजबूती के लिए प्रयोग किया जा सके। यह सरकार की सोची-समझी नीति थी कि सिक्ख-राज्य के पतन के बाद अब सिक्खों को सिर न उठाने दिया जाये। फलस्वरूप, उन्होंने जल्द ही श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर तथा अन्य संबंधित गुरुद्वारों को अपने अधीन कर लिया और इन धर्म-स्थानों को अपने राज्य की मजबूती के लिए प्रयोग करना शुरू कर दिया। इस संबंध में पंजाब के लेफ्टीनेंट गवर्नर इजरटन ने १८८१ ई को लार्ड रिपन को एक पत्र लिखा था कि गुरुद्वारों के प्रबंध को ऐसी कमेटी, जो सरकारी नियंत्रण से मुक्त हो, के हाथ में देना राजनीतिक रूप से बहुत खतरनाक होगा।

इस तरह श्री दरबार साहिब तथा उससे संबंधित अन्य गुरुद्वारों पर सरकार ने अपना पूरा अधिकार जमा लिया तथा सिक्खों की जो कमेटी इन गुरुद्वारों का थोड़ा-बहुत प्रबंध करती थी वह खत्म कर दी गई। सरकार ने १८५७ ई की आजादी की जंग में सिक्खों को अपनी सहायता के लिए प्रयोग करने हेतु पुजारियों द्वारा सिक्खों की आंखों में धूल झोंकने का एक ड्रामा किया, जिसमें जनरल निकलसन को श्री दरबार साहिब में लाकर सिक्ख बनाने का ढोंग रचा। उस समय के चीफ खालसा दीवान के धार्मिक तथा शैक्षणिक कार्यों में भी अंग्रेजों को राजनीति की बू आने लग पड़ी थी और उनको भी संदेह की नजर से देखा जाने लगा। उनकी शैक्षणिक कान्फ्रेंसों आदि में पास किये गये प्रस्तावों के बारे में गुप्त रिपोर्टें प्राप्त की जाने लगीं। कारण यह था कि अंग्रेजी सरकार यह भी नहीं चाहती थी कि सिक्ख पढ़-लिख कर बुद्धिमान हो जायें तथा अपने अच्छे-बुरे में अंतर करने योग्य हो जायें। खालसा कॉलज, श्री अमृतसर के विद्यार्थियों पर

भी आलोचनात्मक नजर रखी जाती थी ताकि वे कोई राजनैतिक दिशा प्राप्त न कर सकें। सरकार को यह निश्चय हो गया था कि खालसा कॉलज में विद्यार्थियों को सरकार की वफ़ादारी के विरुद्ध किया जाता है। सरकार को यह गुस्सा था कि चीफ ख़ालसा दीवान के उपदेशक सिक्खों में जागृति पैदा कर रहे हैं। अगर यह जागृति आ गई तो सिक्ख सरकार के चापलूस नहीं रहेंगे, इसलिए सरकार को सिक्ख एजूकेशनल कान्फ्रेंस तथा शिक्षा के लिए किए जा रहे अन्य प्रयत्न भी पसंद नहीं थे। चाहे सिक्ख एजूकेशनल कान्फ्रेंस के उद्देश्यों में यह स्पष्ट किया गया था कि यह संस्था गैर-राजनैतिक जत्थेबंदी है किंतु सरकार को इसमें से राजनैतिक गंध आती थी। इस बात का प्रमाण मिस्टर पैटरी के उस ब्यान से मिल जाता है जिसमें वह लिखता है कि "क्या एजूकेशनल कान्फ्रेंस शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए ही शुरू की गई है या राजनैतिक कदम बढ़ाने के लिए तथा इकट्ठे किए हुए फंड शिक्षा के लिए खर्च किए जाने के लिए या पंथक-उद्देश्यों के लिए? इससे स्पष्ट हो जाता है कि चीफ खालसा दीवान जैसी निरोल धार्मिक जत्थेबंदी की कार्यवाहियों को भी अंग्रेजी सरकार राजनैतिक ही समझती थी। अंग्रेज नौकरशाही को यह लगता था कि अगर सिक्ख शैक्षणिक रूप से जागृत हो गए तो वे सरकार के वफ़ादार नहीं रहेंगे।

सरकार को यह भी डर रहता था कि अगर चीफ खालसा दीवान ने श्री दरबार साहिब पर कब्जा कर लिया तथा धार्मिक मामलों में नेतृत्व संभाल लिया तो इसके गंभीर परिणाम निकल सकते हैं, इसलिए अंग्रेज हाकिमों ने सरबराहों तथा अपने पिट्ठुओं के जरिए पुजारियों को पहले ही तैयार कर रखा था कि 'सिंघ सभा' वालों से खबरदार रहें, क्योंकि वे (तथाकथित) नीची जाती के लोगों को भी अपने साथ शामिल कर रहे हैं और उनके साथ खाने-पीने से कोई परहेज नहीं कर रहे। वे लोग श्री दरबार साहिब आएं तो उनको मुंह न लगाया जाये। यही कारण था कि श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर तथा अन्य गुरुद्वारों एवं धर्मशालायों के पुजारी एवं महंत 'खालसा दीवान' के आगुओं के विरुद्ध थे। यह बात भी वर्णनयोग्य है कि अंग्रेजी राज्य के प्रभाव तले पुजारी लोग धर्म के उसूल त्याग कर केवल सरकार के पिट्ठू ही बन गए थे। सरकार की नीति यह थी कि सिक्खों को अपने अधीन रखो तथा अन्य कौमों को गुलाम बनाने में इनका प्रयोग करो।

सरकार ऐतिहासिक गुरुद्वारों को अपने कब्जे में रखना चाहती थी क्योंकि वह गुरुद्वारों की शक्ति इनकी आमदन को समझती थी। ऐसी दौलत को वो अपने राज्य के राजनैतिक उद्देश्यों में प्रयोग करना चाहती थी। यह तभी संभव था यदि गुरुद्वारों के सरबराह एवं महंत उनके इशारों पर नाचते। इसी लिए महंतों को अनावश्यक रियायतें दी हुई थीं। समूची अकाली ऐजीटेशन को दबाने के लिए जब्र एवं जुल्म करना, कत्लेआम करना आदि इसी कड़ी के हिस्से थे। जो सरकार चीफ खालसा दीवान जैसी जत्थेबंदी को सरकार-विरोधी कह सकती है अगर वह अकाली-संघर्ष के साथ बागियों तथा विद्रोहियों वाला व्यवहार करे तो बात शीघ्र समझ में पड़ जाती है। जब पंजाब पर खूनी ओडवायर का राज्य था तो वह किसी भी राजनैतिक आंदोलन को सख्ती से दबा देना अपना धर्म समझता था। सरकार समझती थी कि पंजाब 'रंगरूट' भर्ती करने के लिए आरक्षित क्षेत्र है। अगर यहां के लोग सुचेत हो गए तो हमें भर्ती मिलनी कठिन हो जायेगी।

अप्रैल, १९१९ ई में जब श्री अमृतसर का 'जलियां वाले बाग का साका' हुआ तो लोगों को पेट के बल चलने के लिए मजबूर किया गया। औरतों की बेपत्ति की गई तथा उन पर रौंगटे

खड़े करने वाले अनेकों जुल्म ढाए गए।

सिक्खों के धार्मिक जज़बातों के साथ सरकार खिलवाड़ करती रहती थी। कभी कृपाणधारी सिक्खों को गिरफ्तार कर लेती तो कभी कोई ऐसा काम करती जिससे सिक्खों का मनोबल गिरा रहे। इसी संबंध में गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब, दिल्ली की दीवार गिराना, श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर का पानी बंद करना आदि वर्णनयोग्य घटनायें हैं। ऐसी घटनाओं के कारण सिक्खों के अंदर रोष एवं जोश का पैदा होना स्वाभाविक ही था। वे अंदर ही अंदर दांत पीस रहे थे, परंतु सिक्खों की निरोल धार्मिक जत्थेबंदी शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने सिक्खों के जजबातों को हिंसा की पान न चढ़ने दी तथा एक समान शांतमयी आंदोलन का हथियार बरता। सरकार तो चाहती थी कि सिक्ख हिंसा करने पर उतर आएं और इसी बहाने उनको कुचलने का बहाना मिल जाये। अकालियों की शांत रुचि पर गुरुद्वारों की आजादी के जज़बे की सब ओर से प्रशंसा हुई। देश के राजनैतिक क्षेत्र में जूझने वाली पार्टियों ने भी अकालियों का समर्थन किया तथा गुरुद्वारों की आजादी एवं पवित्रता कायम रखने के प्रयत्नों का भरपूर समर्थन करते हुए हर प्रकार की सहायता की। कामरेड सोहन सिंघ 'जोश' के लिखे अनुसार "गुरुद्वारों की आजादी का अकाली संग्राम बहुत महान एवं विशाल संग्राम था, जो कुछ पक्षों से कांग्रेस के स्वतंत्रता संग्राम को भी मात दे गया। सख्ती, मार-काट, जेल-यातनाएं, मृत्यु-दर आदि को देखते हुए कौमी कांग्रेस इस छोटे-से इलाके के लोगों की कुर्बानियों का मुकाबला नहीं कर सकती थी। अकाली-आंदोलन की नींव साधारण किसान एवं गरीब देहाती लोग थे।" *(अकाली मोरचिआं दा इतिहास, पृष्ठ १४)*

इस आंदोलन ने कुर्बानियों भरे पिछले सिक्ख इतिहास को और चमकाया तथा सिक्खों की गिरी हुई हालत को पुनः कायम करने में भरपूर योगदान डाला। इस अंदोलन को 'गुरुद्वारा प्रबंध सुधार' का आंदोलन कहा जाता है, मगर मुख्य रूप से यह 'गुरुद्वारों की आजादी' की लहर थी। अंग्रेजी सरकार ने गुरुद्वारों पर पूरा कब्जा किया हुआ था। गद्दीदार महंत अफसरों की कठपुतली और पालतू नौकर बने हुए थे। वे मसंद बन चुके थे और सिक्ख धर्म के बुनियादी सिद्धांतों को भी छोड़ चुके थे। वे दुराचारी एवं भ्रष्ट हो चुके थे। भ्रष्टाचार उनका रोज का कार-विहार बन चुका था। ये अपराधी अपने अपराधों पर परदा डालने के लिए हाकिमों की कठपुतली के तौर पर अति गिरी हुई करतूतें करते थे। अंग्रेज शासकों की नीति यह थी कि महंतों की करतूतों से आंखें मूंद लो तथा गुरुद्वारों को अंग्रेजी-राज्य की मजबूती के लिए इस्तेमाल करो ताकि इन गुरुद्वारों में से अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध कोई आवाज न उठ सके। इस तरह गुरुद्वारे अंग्रेजी राज्य की रक्षा तथा खुशामद करने वाले लोगों के केंद्र बन कर रह गए। यहां तक कि महंतों के समय गुरुद्वारों में अंग्रेजी राज्य के सदैव रहने की अरदासें भी की जाने लगीं। फलस्वरूप, गुरुद्वारों में सुधार करने की आवाज उठाने वाले सिक्खों को पुजारी घृणा की नजर से देखते थे। पुजारी तथाकथित अछूतों के 'सिंघ' सज जाने पर उनकी अरदास नहीं करते थे, उनसे कड़ाह-प्रसाद नहीं लेते थे। इसके विपरीत अगर कोई अंग्रेज या एंग्लो-इंडियन हाकिम या मुसाफिर गुरुद्वारे में आ जाता तो महंत एवं पुजारी उनके आगे-पीछे फिरते, उनको सिरोपा देते। इस तरह से वे अपने वफ़ादार होने का प्रभाव देते। पूजा का धान खा-खाकर, चरित्रहीन करतूतें कर-करके उनका स्वाभिमान तथा गैरत मर चुकी थी तथा वे अंग्रेज हाकिमों के पालतू गुलाम बन चुके थे।

इन मसंदों ने खून चूसने वाले डायर को

सिक्ख बनाने का एक हास्यस्पद नाटक किया। मिस्टर कौलविन के लिखे अनुसार, जब डायर दोबारा श्री अमृतसर आया तो उसको श्री दरबार साहिब ले जाया गया तथा पुजारियों ने उसे सिक्ख बन जाने के लिए कहा। डायर ने कहा, "मैं लंबे बाल नहीं रख सकता।" तो सरबराह अरूड़ सिंह ने कहा, "हम आपको इसकी छूट दे देंगे।" डायर ने कहा, "मैं सिगरेट पीना नहीं छोड़ सकता।" पुजारी ने कहा, "हम आपको एक सिगरेट साल में एक बार पीने की आज्ञा दे देंगे।" यह बात डायर मान गया। पुजारी ने उसे 'पांच ककार' पहनाये तथा इस तरह 'डायर सिक्ख बन गया।' (The Story of Gen. Dyer by Colvin, page 261)

यह घटना बयान करती है कि पुजारियों ने सिक्ख धर्म एवं गुरुद्वारों के अस्तित्व को कितना हास्यस्पद बना दिया था। इसका प्रतिक्रम यह हुआ कि अंग्रेजी शासक आने पर महंत सिक्खों के कब्जे से निकलकर अंग्रेजों के कब्जे में चले गए। महंत अफसरों की सहायता से जमीनों और जायदादों पर भी काबिज़ हो गये। अब वे गुरुद्वारों को अपनी पुश्तैनी संपत्ति समझने लगे। इस तरह सरकारी अफसरों के सीधे या असीधे प्रभाव द्वारा दुराचारी महंत गुरुद्वारों के मालिक बन बैठे।

गुरुद्वारों की गोलक (धन) का दुरुपयोग करके तथा सरकार की शह पर महंतों ने गुरुद्वारों में मनमर्जी करनी शुरू कर दी। सरकार ने सिक्खी परंपराओं की परवाह न करते हुए गुरुद्वारों में अपने पिट्ठू और गैर-सिक्ख सरबराह नियुक्त करने शुरू कर दिये, जैसे कि गुरुद्वारा बाबे दी बेर, सियालकोट का सरबराह गंडा सिंह बनाया गया। इसी गुरुद्वारे के महंत हरनाम सिंह के विरुद्ध यह दोष साबित हो गया कि वह शराब पीता है तथा गुरुद्वारे की संपत्ति को खुर्दबुर्द करता है। सिक्ख यह सहन नहीं कर सकते थे कि गुरुद्वारे पर किसी पतित तथा सिक्ख रिवायतों के विपरीत काम करने वाले व्यक्ति का कब्जा हो। यह धर्म का अपमान था तथा सिक्खों के लिए चुनौती। सिक्खों ने गंडा सिंह को हटाने के लिए समारोह करने शुरू कर दिये। गंडा सिंह ने गुंडे लाकर संगत पर हमला करवा दिया। गंडा सिंह के पुत्र जौहन हैडा ने गुरुद्वारे के अंदर पिस्तौल निकाल कर सिक्खों को डराना चाहा और झगड़ा करना चाहा। स. अमर सिंघ और स. जसवंत सिंघ झबाल वाले मौके पर पहुंचे तथा लोगों को गुरुद्वारा सुधार लहर के लिए तैयार होने के लिए कहा। संगत ने सर्वसम्मति से फैसला किया कि गंडा सिंह को गुरुद्वारा साहिब का प्रबंधक नहीं रहने दिया जायेगा तथा ज्यादा से ज्यादा कुर्बानियां देकर भी यह प्रण पाला जायेगा। सिक्खों के बेताज बादशाह के सम्मान से सुसज्जित स. खड़क सिंघ ने मोर्चे की कमान संभाली। सरदार जी को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस गुरुद्वारे के अंदर आ गई। संगत ने कहा, "हम सरदार जी को खुद अदालत में पेश करेंगे।" हजारों लोग जलूस की शक्ल में 'गंडू मुर्दाबाद, गुरुद्वारा सुधार लहर जिंदाबाद' के नारे लगाते हुए अदालत में पेश हुए। पांच आगू जिला मजिस्ट्रेट के आगे पेश हुए। उन्होंने न जमानत दी, न सफाई। उनको जेल भेज दिया गया। मजिस्ट्रेट लोगों का जोश भरा इतना बड़ा प्रतिक्रम देखकर घबरा गया तथा उसने दो महीनों के लिए धारा १४४ लगाकर जलसों-जलूसों पर पाबंदी लगा दी। सिक्ख संगत ने उसी रात को जलसा करके लगाई पाबंदी तोड़ दी तथा गुरुद्वारे का प्रबंध एक अस्थाई कमेटी को सौंपा गया। ६ अक्तूबर, १९२० को कमिशनर मिस्टर किंग सियालकोट आया तथा उसने सिक्खों के आगुओं से कहा, "सरकार सिक्खों के धार्मिक मसलों में दखल नहीं देना चाहती।" इस तरह बुनियाद रखी गई 'गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर' की।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के चुनाव तथा सरकार

-डॉ. देविंदर सिंघ विद्यार्थी

सिक्ख-चेतना तथा मुगल बादशाही दोनों समकालीन परिस्थितियों की उपज हैं। 'बचित्र नाटक' का कथन है *"बाबे के बाबर का दोऊ ॥ आप करे परमेसर सोऊ ॥"* समान सामाजिक तथा राजनैतिक पृष्ठभूमि की पैदावार होने के बावजूद दोनों की विकास-गति एक-दूसरे के प्रतिकूल विकास एवं विनाश की तरफ कड़वी बेल (लता) की तरह बढ़ी। अगर एक का आधार सत्य, संतोष तथा सहज रहा तो दूसरी ने सत्ता, सख्ती तथा सरवरी की शरण ली। अगर एक का निशाना सुख, शांति तथा सरबत्त का भला था तो दूसरी का वजूद था जुल्म, जब्र तथा धर्म-परिवर्तन। एक शांति की लहर थी, दूसरी अग्नि का दरिया। बादशाह बाबर से अकबर तक दोनों के संबंध सुखमय रहे। आगे चलकर कट्टरपंथी ब्राह्मणों-मौलाणों की लड़ाई रंग लाई।

सिक्ख गुरु साहिबान की लोकप्रियता मुसलमानों, विशेषत: बादशाह जहांगीर को बहुत खटकी। वह शहजादगी में पंजाब के सूबे का हाकिम रह चुका था। उसने श्री गुरु अरजन देव जी पर शहजादा खुसरो की बगावत के समय उसकी सहायता करने का दोष लगाकर उनको शहीद करवाया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को ग्वालियर के किले में नजरबंद रखा। शाहजहां के समय में भी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के साथ शस्त्रों से लैस शाही फौजों के युद्ध करवाये गए। हर बार शाही फौजों को शर्मिंदगी सहन करनी पड़ी। आखिर गुरु जी ने पहाड़ी क्षेत्र में 'कीरतपुर' नामक नगर बसा लिया। इस प्रकार बादशाहत का गुरु-घर के साथ टकराव पक्का होता गया। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के आत्म-बलिदान, श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के सरवंश-बलिदान तथा बाबा बंदा सिंघ बहादर की बहादुरी की चढ़त से पंजाब में से मुगल सलतनत की जड़ें उखड़ गईं। सिक्ख इसके बाद एक उभरती राज्य-शक्ति बनते गये। बहादुर शाह बादशाह, जिसकी तख्त-नशीनी के समय श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सहायता की थी तथा फरुख्सियर, दोनों लगभग हर वर्ष हुक्म जारी करते रहे कि सिक्ख जहां भी मिले कत्ल कर दिया जाये, माल-असबाब लूट लिया जाये। सिक्खों के काटे हुए सिरों पर नकद इनाम मिलते थे। सिक्खों के धर्म-स्थान गिरा दिए जाते थे। बहुत कड़ी नजर श्री हरिमंदर साहिब, श्री अकाल तख्त साहिब, श्री अमृतसर तथा अमृत सरोवर पर रहती। भारत के बादशाह ही नहीं अफगानिस्तान से चढ़ कर आए लुटेरे भी इन पवित्र-स्थानों को तबाह करने के शौकीन थे। सिक्ख अपने अकीदे से इनका पुनर्निर्माण कर लेते। गुरुद्वारे सिक्खों की शक्ति के अमूल्य स्रोत थे। गुरुद्वारों की गिनती बढ़ रही थी और उनका सदका सिक्खों की अथाह शक्ति द्वारा आखिर एक दिन पंजाब में सिक्ख-राज्य कायम हो गया।

सिक्खों में पुजारियों जैसी कोई जमात नहीं। कई साधू-संत तथा उदासी संप्रदाय के लोग कठिनाई के दिनों में इन धर्म-स्थानों पर सेवा निभाने लगे। ये श्रद्धालु लोग अमृतधारी

संगत का प्यार-सत्कार जीतने में सफल हुए। श्रद्धावानों की ओर से जायदाद तथा जागीरें भेंट होने लगीं। पुराने सदाचारी महंतों की संतानों में विकार आने लगे। उन्होंने गुरुद्वारों की जायदाद को निजी जायदाद बना लिया। समय की सरकार के करिंदे स्वार्थवश मदद देने लगे। कई स्थानों पर इन महंतों में चारित्रिक कमजोरियां भी सामने आने लगीं तथा उनको छुपाने के लिए धड़ेबंदी एवं धक्केशाही को भी शह मिली। सिक्ख राज्य के समय गुरुद्वारों की बनावट को संवारने के लिए सोने तथा संगमरमर की तरफ अधिक ध्यान दिया गया। सभी प्रबंध पुराने हाथों में ही बने रहे थे। महाराजा रणजीत सिंघ के तप-तेज के सामने तो किसी को भी उभरने का मौका नहीं मिल सकता था। अंग्रेजी राज्य आया तो अंग्रेज पादरियों की नजर श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर पर आ टिकी। वे हर हाल में श्री दरबार साहिब को इसाई धर्म-केंद्र बनता देखने के इच्छुक थे। उनकी पीठ थपथपाने वाली सरकार थी। खैरियत यह रही कि हालात ने उनको इसका समय नहीं दे रहे थे।

गुरुद्वारों की जायदादों तथा महंतों के गिरते व्यवहार को संगत चिंता से देख रही थी। गुरुद्वारों का प्रबंध पराये हाथों में जाने से जनता का स्वभाव उतावला होने लग गया था। लोग धर्म-क्षेत्र में घटित होती अनीतियों को शीघ्रता से दूर करना चाहते थे। उनमें आत्म-रक्षा की चिंगारी अभी सुलगती थी। कई जगहों पर ऐसी घटनायें घटित हुईं जिसके कारण महंतों की आपस में उकसाहट तथा आर्थिक सहयोग से गैर-मुनासिब हथकंडे एवं गुंडागर्दी के मामले उभरे, जैसा कि गुरुद्वारा ननकाणा साहिब में। ऐसी घटनाओं ने महंतों के प्रति लोगों का मोह भंग करवाया। गुरुद्वारों की जायदादें पंथक अधिकार में आईं। श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर के पुजारियों की हमदर्दी डेरेदारों से थी। तथाकथित अछूत जातियों में से नये सजे सिंघों की अरदास के मसले को लेकर आधुनिक सूझवानों तथा प्राचीन-पंथियों में दरार पड़ी। लोकमत का उभार देखकर 'पुजारी' सेवा छोड़ गए। स्थानीय सूझवानों ने संगत की रुचि पंथक हाथों में सेवा-संभाल सौंपने की तरफ देखकर एक तत्कालीन कमेटी स्थापित कर ली। महंत एवं पुजारी कमिशनर लाहौर के दर पर फरियाद लेकर गए। सरकार ने भरोसा दिया कि "पुजारियों के हक-हकूक को सरकार मानती है तथा उनकी हर तरह से मदद करेगी।" महंत, पुजारी एवं सरकार एक तरफ तथा सिक्ख सिद्धांतवादी संगठन दूसरी तरफ, आमने-सामने दो दल बन चुके थे। सरकार ने २१ जनवरी, १९२५ ई को 'गुरुद्वारा बिल' का मसौदा प्रकाशित कर दिया। प्रकाशित मसौदा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के २७ अप्रैल, १९२५ के अधिवेशन में विचारा गया। साधारण प्रक्रिया सरकार की तजवीज का विरोध करने की थी परंतु लंबी सोच-विचार के उपरांत फैसला हो गया कि विरोधता पर जोर न दिया जाये, बल्कि निम्नलिखित तीन संशोधन सुझाए जायें :

१. श्री अकाल तख्त साहिब तथा श्री केसगढ़ साहिब का तख्त शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के पास रहे।

२. सिक्ख महिलाओं को वोट का पूरा अधिकार हो। (भारत में महिलाओं को वोट का अधिकार पुरुषों के बराबर दिए जाने की यह मांग पहली थी।)

३. गुरुद्वारों की आमदन धर्म, विद्या तथा दान के कार्यों के लिए खर्च की जाये।

९ जुलाई, १९२५ ई. को यह बिल पंजाब कौंसिल ने पास किया, २८ जुलाई को गवर्नर ने स्वीकृति दी तथा १ नवंबर, १९२५ को लागू करार दिया।

गुरुद्वारा एक्ट १९२५ सरकार की रग पर अंगूठा रखकर प्राप्त किया गया था, इसलिए पंजाब तथा पंजाब की रियासतों के चुनिंदा ऐतिहासिक गुरुद्वारे ही इस एक्ट के अधीन में लाये गये। इन गुरुद्वारों का सार्वजनिक प्रबंध सरकार के अधीन आ जाने से भी सरकार का प्रतिकर्म कोई ज्यादा सरल नहीं था। बड़ी बात यह थी कि देश में अन्य कहीं भी हिंदू धर्म-स्थानों या मुसलमान-मसजिदों के लिए कोई ऐसा कानून नहीं बनाया जा सका। कई बड़ी हैसियत वाले महंत, जो गुरुद्वारे की जायदाद को निजी जागीर समझते आए थे, सरकार से टूट गए थे। ये लोगों में मान्यता वाले आदमी सरकार के कई काम-धंधे सहज ही संवारते आए थे। वे हाकिमों की सेवा करने तथा प्रतिष्ठा बढ़ाने में तत्पर रहते थे। इन गुरुद्वारों का अधिकार पंचायती हाथों में आ जाने से सिक्खों की सुधार लहर के आगुओं को ही बल नहीं मिला बल्कि देश-भक्त शक्तियों को भी एक अच्छा तथा बलवान सहयोगी मिल गया। ये स्वतंत्रता-युद्ध में भरपूर हिस्सा डालने लग गए। आजादी के संघर्ष में जितने सिर सिक्खों के लगे उनकी गिनती अन्य सभी से ज्यादा रही है। स. अमर सिंघ तथा स. जसवंत सिंघ झबालीये के जोर देने पर श्री अकाल तख्त साहिब पर पुनः एकत्रता जुड़ी तथा गुरमता सोध (पारित) कर 'गुरुद्वारा कानून' को प्रवानगी दी गई। जून के माह (१९२६) में चुनाव हुआ। इस चुनाव में सरदार बहादर महिताब सिंघ का दल अकाली दल के मुकाबले खड़ा हुआ। पुरानी कमेटी में यह दल पूरी तरह से काबिज रहा था। यह भी कहा जाता था कि चुनाव के दौरान इस दल को सरकारी शह तथा सहयोग भी हासिल था, किंतु चुनाव में यह दल बुरी तरह हारा और विजय अकाली दल के हाथ लगी।

नई कमेटी में कुल १२० सदस्य चुने गए थे :

१. सरदार बहादर दल (सरकार के प्रभाव तले)	२६ सदस्य
२. शिरोमणि अकाली दल	८५ सदस्य
३. पंथक सुधार कमेटी	५ सदस्य
४. आजाद उम्मीदवार	४ सदस्य
कुल गिनती	१२० सदस्य
इनमें से रियासतों के नुमाइंदे	१६ सदस्य
नामजद किए गए	१४ सदस्य
पूरी गिनती	१५० सदस्य

स. महिताब सिंघ ने शिरोमणि कमेटी की अध्यक्षता से त्याग-पत्र दे दिया तथा कमेटी ने कानूनी महकमे से भी अपने संबंध तोड़ लिए, मगर सदस्य बने रहे।

१८ जून, १९२६ ई. को गुरुद्वारा एक्ट के अधीन जो पहला चुनाव हुआ उनमें चुने गए सदस्यों की पहली मीटिंग ४ सितंबर, १९२६ ई. को श्री अमृतसर में डिप्टी कमिशनर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। ये प्रस्ताव पारित हुए:

१. सार्वजनिक रूप से बनाई गई कमेटी अपना चार्ज नई संवैधानिक कमेटी को सौंप कर आभार-मुक्त हो जाए।
२. कार्यकारिणी कमेटी की कार्यवाहियों को स्वीकृत किया गया।
३. संघर्ष के समय कैद किये गए सारे सिक्ख तुरंत आजाद किए जायें।
४. संघर्ष के समय जब्त की गई जायदादें, पेंशनें बहाल हों।
५. जुर्माने, जलावतनियां मनसूख हों तथा

नंबरदारियां बहाल हों; बाबा खड़क सिंह जी को रिहा किया जाए।

६. कमेटी का सारा कार्य पंजाबी में हो; अंग्रेजी हिंदसे लेखे-जोखे आदि में न प्रयोग किये जायें।

७. सिक्ख गुरुद्वारा एक्ट पंजाब के साथ-साथ पूरे हिंदोस्तान तथा देसी रियासतों के ऐतिहासिक गुरुद्वारों पर लागू किया जाए।

गुरुद्वारा एक्ट जिस रूप में पास किया गया था, उसका इस्तेमाल पंजाब की रियासतों में कुछ पृथकता से था। अंग्रेजी राज्य अधीन पंजाब में हर सिक्ख स्त्री-पुरुष, जो बालिग हो, को गुरुद्वारा प्रबंध के लिए वोट देने का अधिकार मिल गया था, जबकि रियासतों के सदस्यों की नामजदगी के अधिकार उन रियासतों के राजाओं की संपत्ति पर निर्भर करते थे। यह दरार इन रियासतों के भारत में विलीन होने से खत्म हुई। १९२० ई वाली कमेटी की एकत्रता कमेटी के अपने अध्यक्ष द्वारा बुलाई जाती थी। गुरुद्वारा एक्ट अधीन बनी कमेटी को बुलाने का अधिकार श्री अमृतसर के डिप्टी कमिशनर को मिल गया था। यह बदलाव ज्यादातर सदस्यों को खटकता रहा। चुनाव पहले तीन वर्ष बाद होता था। अखबार 'अकाली' के संपादक स. मंगल सिंह को पहला अध्यक्ष चुना गया।

८ अक्तूबर, १९२७ ई को सामान्य एकत्रता श्री अकाल तख्त साहिब पर हुई। स. खड़क सिंह, जो कारावास से रिहा होकर आए थे, सर्वसम्मति से शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष चुन लिए गए तथा मास्टर तारा सिंह उपाध्यक्ष नियुक्त हुए। एक सात-सदस्यीय कार्यकारिणी कमेटी स्थापित की गई। कार्यकारिणी कमेटी के सारे सदस्य स. मंगल सिंह तथा मास्टर तारा सिंह की सलाह के साथ चुने गए, जिनके नाम इस प्रकार थे :

१. स. भाग सिंह, वकील, गुरदासपुर

२. स. भाग सिंह, कैनेडियन

३. स. जसवंत सिंह, दानेवाल

४. ज्ञानी करतार सिंह, लायलपुरी

५. ज्ञानी शेर सिंह

६. स. ब. महिताब सिंह

७. स. मंगल सिंह

ज्ञानी करतार सिंह की तजवीज के अनुसार फैसला हुआ कि कमेटी की कार्यवाही को एक मासिक पत्र 'गुरुद्वारा गजट' के जरिए छापा जाया करे। १९३०, १९३३, १९३६ एवं १९३९ ई. तक चुनाव हर तीन वर्ष बाद होता रहा। हर चुनाव में विपक्षी दल पैदा होते, चुनाव लड़ते तथा कार्य की गति की ओर खालसे को आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहते। वोटरों ने हर चुनाव के समय पंथक जत्थेबंदी की भावना को पूर्ण समर्थन दिया। विपक्षी दलों की सफलता 'आटे में नमक' के बराबर बनी रही। इस दौर के बड़े मसले 'कृपाण पर पाबंदी' तथा 'शहीद-गंज का मसला' थे। दोनों मसले भड़काऊ ही नहीं खतरनाक भी थे। सरकार के अंदर का मुसलमान वर्ग सांप्रदायिकता को शह दे रहा था। अन्य संस्थायें तथा शख्सियतें तमाशबीन की हद तक खतरे से बेपरवाह थीं, चाहे कि सूझवानों के नेतृत्व ने झगड़े नहीं होने दिये।

पंजाब में मुसलमानों की बहुसंख्या थी। हिंदू तथा सिक्ख मिलकर चलते तो हवा की दिशा ही बदल जाती। खुशकिस्मती से आर्य-समाजी विरोध-भावना के बावजूद शहीद-गंज के मसले के समय राय बहादुर बद्रीदास ने सिक्खों के दावे की सफल वकालत करके बहुत प्रशंसनीय व्यवहार बनाये रखा। उनके हमख्याल उदारचित्त हिंदू सहयोग के लिए आगे न आए होते तो टिक्का जगजीत सिंह एम. एल. ए. द्वारा पेश किये गये

गुरुद्वारा एक्ट संशोधन बिल के समय भेदभावों को और भी उभरने का मौका मिलता। हैदराबाद के निजाम की कुछ नीतियों के विरुद्ध सत्याग्रह की तहरीक चलाई हुई थी। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने इस सत्याग्रह के समर्थन का प्रस्ताव पारित करके राजनैतिक सांझ को बढ़ावा दिया। इस बात की परवाह नहीं की कि आर्य समाज का सिक्खों के प्रति क्या रवैया था? अगले चुनाव १९३९ के पांच वर्ष बाद १९४४ ई में हुए। इस चुनाव के समय कांग्रेसी सिक्खों द्वारा सृजित खालसा दल को १३२ उम्मीदवार खड़े करके भी केवल ३ सीटें ही मिलीं। सांझे पंजाब में यह आखिरी चुनाव था। फिर देश-विभाजन का अंधड़ आया। बहुत-से गुरुद्वारे सिक्ख संगत से दूर पाकिस्तान के अधिकार में रह गए। भारतीय पंजाब में गुरुद्वारा एक्ट की धारा ५४ के अनुसार २८-०५-१९४८ ई को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की एकत्रता में १५७ सदस्य शामिल किये गये। जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके अध्यक्ष चुने गये। यह पहली बार था कि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी कांग्रेस के अधिकार में जुड़ी।. श्री गुरु ग्रंथ साहिब के हिंदी संस्करण की छपाई, बहुत-सी इमारतों के निर्माण को काफी आगे बढ़ाया।

अगली कमेटी के चुनाव होकर फरवरी, १९५५ ई में नई कमेटी वजूद में आई। इसके १५१ सदस्य थे। इस कमेटी में पुन: अकाली दल का कब्जा हुआ। इस कमेटी का बड़ा कारनामा ग्वालियर में छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की याद में गुरुद्वारा-निर्माण का प्रस्ताव पारित करना, श्री दमदमा साहिब को पांचवें तख्त के रूप में प्रवानगी देना जैसे कदम उठाना रहा। मास्टर तारा सिंघ तथा देश के प्रधानमंत्री के मध्य समझौते को अवैधानिक क्रिया मानकर उसकी निंदा की गई, क्योंकि इस समझौते को शिरोमणि कमेटी की स्वीकृति के बिना व्यक्तिगत रूप में प्रवान चढ़ाया गया था। ऐसा करना मास्टर तारा सिंघ के अधिकार-क्षेत्र में नहीं था। इस कारण इसी समझौते के अधीन की गई कार्यवाहियों की कमेटी बंधुआ नहीं हो सकती थी। भारत सरकार ने ही इस समझौते को अपने स्वभाव के अनुसार न पूरा किया। १९५६ ई में जब देश में भाषाओं के आधार पर राज्य-विभाजन किया गया तो पंजाब में हिंदी एवं हिंदू-सिक्ख सवाल को उभारकर पंजाबी राज्य के संकल्प को ठुकरा दिया गया। गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष का पत्ता काट दिया। १९५९ ई में एक्ट में संशोधन द्वारा नये चुनाव-क्षेत्र बनाये गये, शिरोमणि कमेटी का अध्यक्ष भी कांग्रेसी बना लिया गया। सदस्यों को चुनाव के समय के हथकंडों द्वारा चुनाव का मैदान बनाया गया। साधसंगत बोर्ड के नाम तले नया चुनाव-दल खड़ा किया गया। १९ जनवरी, १९६० ई को चुनाव के परिणाम निकले। इस नए साधसंगत बोर्ड की झोली में मात्र ४ सीटें (अकाली दल को १३६ सीटों के मुकाबले) हाथ लगीं।

१९६५ ई में गुरुद्वारा चुनाव का दंगल संत चंनण सिंघ तथा मास्टर तारा सिंघ के दरमियान हुआ। कांग्रेस तमाशबीन बनी देखती रही। १९७० ई में शिरोमणि कमेटी के नये चुनाव का अवसर था, किंतु सरकार टस से मस न हुई। गुरुद्वारा एक्ट १९२५ को १९५७ ई के इंटर स्टेट कार्पोरेशन एक्ट की अंतिका में जोड़कर नए मसले खड़े करने की जगह बना ली। १९७७ ई में इंदिरा गांधी की हार के कारण कांग्रेस सरकार की ३० वर्ष पुरानी अजारेदारी खत्म हुई। जनता सरकार ने 'सर्व भारतीय

गुरुद्वारा एक्ट' बनाने का वचन दिया तथा केंद्र की निगरानी में १९७९ ई को गुरुद्वारा चुनाव करवाये। शिरोमणि अकाली दल ने १४० में से १३२ सीटें जीतीं, मात्र ८ सीटें विपक्षी दल प्राप्त कर सके। इसके बाद सत्रह वर्ष बाद चुनाव हुआ।

भारत के सबसे पुराने राजनैतिक चिंतक कौटिल्य ने अपने 'अर्थ शास्त्र' में बताया है कि सरकार को धर्म-स्थानों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। स्वतंत्र भारत की सरकार बड़ी हद तक उस पुरुष के लाभकारी पक्ष को पल्ले बांध कर चल रही है। अपने मंतव्यों के लिए सरकार की मूल इच्छा रही है कि सिक्खों के धर्म-स्थानों में ज्यादा से ज्यादा दखल देकर अपनी धांक जमाए रखी जाए। ये यत्न गुरुद्वारा एक्ट बनने के समय से ही जारी हैं।

सिक्ख अपने मूल से ही, स्वभाव तथा मानसिक झुकाव के अनुसार मन, वचन तथा कर्म से धर्म के साथ जुड़े रहे हैं और जुड़े रहना चाहते हैं। वे सदा चाहते आए हैं तथा चाहते रहेंगे कि धर्म उनकी राजनीति पर हाथों से छाया करे ताकि उनको राज-मद भटका न सके, परंतु राजनीति का हाथ वे अपने धर्म पर न कभी बर्दाश्त कर सके हैं और न कभी बर्दाश्त करेंगे। इस सिद्धांत में सिक्खी चिंतन की दृढ़ श्रद्धा का साक्षी सिक्खों का इतिहास है।



कविता

शराब बड़ी खराब

अक्ल पर पत्थर पड़ें तो, आदमी पीता शराब।
और जब चढ़ता नशा तो, अक्ल दे जाती जवाब।
क्या सही है, क्या गलत है, कोई न रहता हिसाब।
पैर क्या ईमान भी तब, लड़खड़ाता बेहिसाब।
न रहे काबू जुबां पर, न रहे कोई हिज़ाब।
जिस ज़िगर पर नाज होता, वो ज़िगर होता खराब।
गुल सभी सेहत के झड़ते, सिर्फ कांटों का गुलाब।
न खुदी का इल्म रहता, न खुदा का खौफ-दाब।
आदमी शैतान का तब, ओढ़ लेता है नकाब।
भूलता तहज़ीब सारी, भूलता सारे सवाब।
ज़िंदगी की जंग में भी, हो न पाता कामयाब।
तोड़ता उम्मीद सबकी, तोड़ता अपनों के ख़्वाब।
नूर में महताब था जो, रूह जिसकी आफताब।
आज वो होकर पियक्कड़, खो चुका सब आब-ताब।
लोग जिसको पूछते थे, था कभी आली-जनाब।
आज गलियों में लुढ़कता, नालियों का है नवाब।
आओ हम यह प्रण करें, कभी न पियेंगे शराब।
घर-परिवार व कौम फिर, करने लगेगी हम पे नाज़।



-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली (उ. प्र.)-२४३००३, मो : ०९४११६०७६७२

सिक्ख नसलकुशी : नवंबर १९८४

*-स. सुरजीत सिंघ**

'कमीशन ऑफ इन्क्वायरी एक्ट' के नाम से एक कानून है जिसके अंतर्गत सरकार द्वारा आयोग का गठन किया जाता है, जो घटना के प्राथमिक कारणों एवं दोषी व्यक्तियों का पता लगाकर इस प्रकार की घटना अथवा दुर्घटना की पुनरावृत्ति न हो इसके लिए परामर्श एवं सुझाव जांच-रिपोर्ट के माध्यम से आयोग सरकार को प्रेषित करता है। विश्व में आयोग गठन की प्रक्रिया से हटकर हमारे देश में आयोग संबंधी कुछ भिन्नताएं हैं। यहां अक्सर तात्कालिक तनाव को कम करने एवं संबंधित प्रकरण से जनता का ध्यान हटाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा आयोग का गठन किया जाता है और लंबी अवधि की प्रतीक्षा के उपरांत जब सब कुछ ठंडा पड़ जाता है तथा लोग घटना से संबंधित अधिकांश बातें भूलने लग जाते हैं तब जाकर कहीं आयोग की रिपोर्ट दिखावे के लिए पेश कर दी जाती है। इसी प्रकार वर्ष १९८४ सिक्ख नसलकुशी (कत्लेआम) की जांच के लिए प्रथम आयोग न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र की अध्यक्षता में गठित किया गया था, तत्पश्चात ८ आयोग और, किंतु समस्त असफल रहे। घटना के १६ वर्ष पश्चात सन् २००० में सर्वोच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायाधीश न्यायमूर्ति जी. टी. नानावती की अध्यक्षता में केंद्र सरकार द्वारा गठित आयोग की ३३९ पृष्ठों की जांच-रिपोर्ट घटना के २१वें वर्ष में ९ फरवरी, २००५ को प्रस्तुत की गई थी, जो ६ माह की अवधि के अंतिम दिवस ८ अगस्त, २००५ को संसद के पटल पर खानापूर्ति हेतु कार्यवाही रिपोर्ट सहित रख दी गई। यह कहना सर्वथा उचित ही होगा कि यदि घटना से एक वर्ष के अंदर-अंदर आयोग की रिपोर्ट आ गयी होती तो कारगर और निश्चित परिणाम सामने आते जिससे दोषियों को सजा एवं पीड़ितों को न्याय एवं राहत की उम्मीद होती, किंतु अफसोस कि आजकल आयोग का गठन और उसकी सिफारिशों पर कार्यवाही इत्यादि पूर्णतया राजनीतिक लाभ-हानि का भाग बन कर रह गई है, क्योंकि सरकार के सम्मुख आयोग की सिफारिशों को लेकर केवल एक ही बाध्यता शेष बची है कि वह ६ माह की अवधि में इन सिफारिशों को संसद के सामने प्रस्तुत कर दे।

नवंबर १९८४ में हुए सिक्ख कत्लेआम पर नानावती आयोग ने भी, जैसा अनुमान लगाया जा रहा था, परिणामतः उसी मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है। वास्तव में हमारे देश में आयोगों की उपयोगिता संदिग्ध ही है, क्योंकि इनका गठन अवकाश-प्राप्त न्यायाधीशों की अध्यक्षता में होता है जो मौजूदा सरकार एवं सरकारी नीतियों के विरुद्ध टिप्पणी करने में अपने आप को असहाय महसूस करते हैं, इसलिए 'भरोसेमंद सबूत' और 'बहुत संभव है' इत्यादि शब्दावली का प्रयोग किया जाता है। आज तक कोई भी जांच-आयोग किसी प्रभावशाली राजनेता अथवा नौकरशाह को सजा दिलाने में सक्षम

**५७-बी, न्यू कॉलोनी, गुमानपुरा, कोटा (राज.)-३२४००६*

नहीं रहा है।

नानावती आयोग की रिपोर्ट ने पुरानी वीभत्स व दिल दहला देने वाली रक्तरंजित घटनाओं के घाव हरे कर दिये हैं, क्योंकि उस समय जो बच्चे थे, अब जवान हो गए हैं और जो जवान थे, वे बुढ़ापे की ओर कदम बढ़ा चुके हैं। बच्चों के सामने पिता को, मां के सामने पुत्र को, बहन के सामने भाई को और पत्नी के सामने पति को बेरहमीपूर्वक योजनाबद्ध ढंग से कत्ल कर उनकी दुकानें, घर-बार, प्रतिष्ठान और गुरुद्वारा साहिबान लूट लिए एवं जला दिए गये थे, उनकी आंखों से निरंतर मासूमियत के आंसू बह रहे हैं और मन भीतर ही भीतर कचोट रहा है। प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या किन्हीं अंगरक्षक द्वारा की गई होगी, किंतु इसके लिए व्यर्थ में ही समूचे सिक्ख समाज को दोषी ठहराया जाना और कत्लेआम करना सर्वथा अनुचित ही कहा जाएगा। देश की मौजूदा व्यवस्था में न्याय का मिलना वैसे भी संदेहास्पद ही माना जाता है, फिर २५ वर्ष पश्चात क्या उम्मीद की जा सकती है?

देश-भक्त सिक्ख समुदाय का सदैव गौरवशाली राष्ट्रवादी इतिहास और अनूठे योगदान-बलिदान की श्रेष्ठ परंपरा प्रारंभ से रही है। चाहे देश की आजादी की लड़ाई हो, १९६२ का भारत-चीन का युद्ध हो, १९६५ का भारत-पाकिस्तान का युद्ध हो, १९७१ का बंगलादेश का युद्ध हो, १९९९ का कारगिल का युद्ध हो अथवा अन्य, सरबत्त का भला चाहने एवं मानव-मानव एक समान के उद्देश्य वाले सिक्ख समाज ने सदैव ही अग्रिम पंक्ति में रह देश के लिए सर्वाधिक कुर्बानियां एवं योगदान दिया है। सिक्ख माताओं एवं बहनों ने युद्ध में जूझ रहे अपने फौजी भाइयों के लिए स्वयं खाना बना कर जहां संभव हुआ वहां स्वयं पहुंचाने गईं और अन्य सिक्ख भाइयों ने अपने ट्रक, ट्रैक्टर, ट्रालियां तक राष्ट्र-सेवा के पुनीत कार्य में आवश्यकता अनुसार लगा दिए। देश के किसी भी कोने में यदि कहीं भूकंप, बाढ़ या सूखे की कोई त्रासदी हुई तो *'सेवा करत होइ निहकामी'* वाले सिक्ख समाज ने दिल खोलकर यथासंभव लंगर चलाये, धन, कपड़े, दवाइयां इत्यादि पीड़ितों तक पहुंचा कर मानव-सेवा का आदर्श प्रस्तुत किया है।

यदि भारतीय इतिहास के आंकड़ों का अवलोकन किया जाए तो स्वतंत्रता आंदोलन में हुए जलियां वाला बाग कांड में अंग्रेजी हकूमत ने जिन १३०० निहत्थे भारतीयों को गोलियों से भून डाला था उसमें से ७९९ तो केवल सिक्ख समुदाय के ही थे। भारत की स्वाधीनता हेतु मुख्य आंदोलनरत **'कूका लहर'** के वीर सरदारों को जंगलों से पकड़-पकड़ कर, तत्कालीन अंग्रेजी हकूमत द्वारा समय-समय पर ब्रिटिश तोपों के मुंह के आगे बांधकर, गोले दाग, शरीर को लहूलुहान कर, चिथड़े-चिथड़े उड़ा निर्दयतापूर्वक निरंतर शहीद किया जाता रहा, हाथ-पैर काट दिए गए, भारत और बर्मा की जेलों में भूखे-प्यासे तड़प-तड़प कर मरने दिया गया, वे शत्प्रतिशत सिक्ख समुदाय के शूरवीर ही थे।

"देह सिवा बरु मोहि इहै सुभ करमन ते कबहूं न टरों" का उद्देश्य लेकर धर्म व देश की आन-बान-शान की रक्षार्थ सर्वस्व न्यौछावर कर सिक्ख समाज ने अपने आप को भाग्यशाली माना। अंग्रेजी गुलामी की जंजीरें तोड़ने के लिए गठित की गई **'आजाद हिंद फौज'** के ४२००० सैनिकों में से २८००० तो केवल सिक्ख शूरवीर ही थे।

उल्लेखनीय है कि नंवबर १९८४ के सिक्ख कत्लेआम में केवल राजधानी दिल्ली में

ही चार हजार से अधिक सिक्खों की नृशंस हत्या कर बड़े पैमाने पर तोड़फोड़ एवं आगजनी की गई थी। भारत के अन्य राज्यों, जहां पर केंद्र पर आसीन एक ही राष्ट्रीय पार्टी की छत्रछाया वाली सरकारें थीं, वहां पर भी इसी प्रकार स्थानीय पुलिस एवं प्रशासन ऊपरी दबाव के चलते मूकदर्शक बन कर्त्तव्यविमुख हो अप्रत्यक्ष रूप से दंगाइयों की मदद ही करता नजर आया, क्योंकि उसकी उपस्थिति में ही दंगाई निर्दोष, निहत्थे परिवारों को नोच-नोच कर काटते रहे, मारते रहे और जलाते रहे। आश्चर्य कि तत्कालीन सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी के कतिपय ताकतवर नेता दंगाइयों में संलिप्त हो दंगा करने, कराने एवं भड़काने की कथित भूमिका निभाते नजर आये जिससे पूरे राष्ट्र का शीश शर्म से झुका जा रहा है। बड़ी लज्जा की बात है कि जिन पर सुरक्षा का दायित्व था वही रक्षक *'उल्टी बाड़ खेत को खाए'* को प्रमाणित करते हुए कर्त्तव्यविमुख हो क्रूर नरभक्षक बन गए। रिकार्ड में हेराफेरी कर सबूत, साक्ष्य नष्ट करते रहे, धमकाते रहे, तो अनुमान लगाया जा सकता है कि उस राष्ट्र का क्या होगा!

स्वतंत्र भारत के इतिहास में ऐसा नरसंहार पहले कभी नहीं हुआ जहां महिलाओं एवं बच्चों तक को भी नहीं छोड़ा गया हो। भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष और सहिष्णु राष्ट्र के माथे पर यह न मिटने वाला कलंक है। सिक्ख कत्लेआम की विभीषिका और गंभीरता ने जर्मनी में हुई हिटलरशाही की क्रूरता को भी पीछे छोड़ दिया। दिल्ली के सिक्ख कत्लेआम से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण फाइलें पूर्व में ही गायब कर दी गईं एवं मूल रिकार्ड भी ही भारी हेराफेरी हुई। सरकारी रिकार्ड के अनुसार केवल राजधानी दिल्ली में ही २७३३ सिक्ख मारे गये थे जबकि वास्तविक आंकड़ा तो ४००० के भी ऊपर है, १००० एफिडेविट प्राप्त हुए और २०० गवाहों से पूछताछ की गई। कुल दर्ज ५८७ आपराधिक मामलों में से २४१ की तो फाइलें ही गायब मिलीं। मूल रिकार्ड में हेराफेरी से २५३ आरोपी खुलेआम बरी हो गए, केवल २५ मामलों में ही आरोप सिद्ध हो सके जो संदिग्ध ही रहे। लगभग ३० पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध दर्ज आपराधिक मामलों में से १४ की तो फाइलें ही उपलब्ध नहीं हुईं, मूल रिकार्ड में हेराफेरी से १० दोषमुक्त हो गए जो कि सरकारी तंत्र की शिथिलता और अपेक्षा प्रदर्शित करता है।

सरकार दोहरा मानदंड अपना रही है। आजादी की लड़ाई में अंग्रेजों द्वारा फांसी पर चढ़ाए गये १२१, बजबजघाट में अंग्रेजी गोलियों से शहीद हुये ११३ एवं कालापानी की उम्र-कैद हुए २६४६ भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों में से क्रमश: ९३, ६७ तथा २१४७ तो केवल सिक्ख शूरवीर ही थे। ये आंकड़े सिक्ख समुदाय की वीर-गाथा एवं राष्ट्र-भक्ति की भावना प्रदर्शित करते हैं। अमर शहीद स. भगत सिंघ, स. ऊधम सिंघ एवं असंख्य सिक्ख शूरवीरों के आजादी हेतु किए गये बलिदानों को सारा राष्ट्र स्मरण एवं नमन करता आ रहा है। फील्डमार्शल अरजन सिंघ, महानायक जनरल स. जगजीत सिंघ (अरोड़ा), जिन्होंने बंगलादेश आजाद करवा कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की ख्याति और गौरव को प्रतिष्ठापित किया, सदैव आदरणीय रहे हैं। हरित-क्रांति का प्रश्न उठा तो 'केंद्रीय अनाज भंडारण पूल' में केवल पंजाब ने ही लगभग पचास प्रतिशत अनाज जमा कराकर भारत के स्वावलंबन होने में मुख्य भूमिका निभाते हुए पूर्ण सहयोग प्रदान किया है। इससे

(शेष पृष्ठ ५० पर)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आगमन की स्मृति में शोभायमान गुरुद्वारा टोका साहिब

*-डॉ. प्रदीप शर्मा स्नेही**

हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, पंजाब व देश के अन्य राज्यों में अनेक स्थान महान सिक्ख गुरु साहिबान की चरण-रज से पवित्र हुए हैं। आज इन पावन स्थानों पर गुरु साहिबान के आगमन के प्रतीक-स्वरूप भव्य गुरुद्वारा साहिबान स्थापित हैं। इसी प्रकार दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी से जुड़े अनेक भव्य गुरुद्वारा साहिबान इन प्रदेशों की संगत को धन्य कर रहे हैं। इन्हीं गुरुद्वारा साहिबान में से एक है हरियाणा व हिमाचल की सीमा पर स्थित गुरुद्वारा टोका साहिब।

हरीतिमा से आप्लावित शिवालिक की पहाड़ियों की तलहटी में रूण नदी के तट पर स्थित गुरुद्वारा टोका साहिब प्रतिवर्ष हजारों श्रद्धालुओं की श्रद्धा का मुख्य केंद्र बनता है। चंडीगढ़-देहरादून सड़क-मार्ग पर स्थित नारायणगढ़ से मात्र ७-८ किलोमीटर की दूरी पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के आगमन की स्मृति में निर्मित इस दर्शनीय गुरुद्वारा साहिब में हरियाणा, पंजाब व हिमाचल से अनेक संगत श्रद्धा-भाव से आती हैं। इस गुरुद्वारे की विशेषता यह है कि गांव टोका तो हरियाणा की सीमा में आता है और गुरुद्वारा साहिब रूण नदी के दूसरे तट पर हिमाचल प्रदेश की सीमा में स्थित है। हिमाचल व हरियाणा की मिलन-स्थली पर शिवालिक पहाड़ियों की गोद में स्थित यह गुरुद्वारा देश भर के विशिष्ट एवं ऐतिहासिक गुरुद्वारों में अग्रगणय है।

कहा जाता है कि नाहन के राजा मेदनी प्रकाश का टिहरी-गढ़वाल के राजा फतेहशाह से अक्सर सीमा-विवाद रहता था। राजा ने गुरु जी के बारे में सुना कि वे राजाओं को परस्पर मिलजुल कर रहने का संदेश देते हैं। इसी का ध्यान रखते हुए राजा ने गुरु जी को अपने राज्य की भूमि पर अपने चरण डाल उसे पवित्र करने का भावप्रवण आग्रह किया। गुरु जी ने राजा का आग्रह स्वीकार कर लिया और अक्तूबर, १६८४ ई. को अपने परिवार, सिक्ख संगत तथा सेना के एक दल सहित नाहन की ओर चल पड़े। अनंदपुर साहिब से कीरतपुर, रोपड़, खरड़, मनीमाजरा, रामगढ़, रायपुर रानी व भूरेवाला होते हुए सन् १६८५ के आरंभ में नाहन राज्य की सीमा पर स्थित टोका गांव जा पहुंचे। राजा मेदिनी प्रकाश ने गुरु जी का भव्य स्वागत किया और उन्हें आदरपूर्वक नाहन शहर लेकर आया। बाद में नाहन शहर में गुरु जी के आगमन की स्मृति में एक भव्य गुरुद्वारे का निर्माण किया गया। राजा की इच्छा का सम्मान करते हुए गुरु साहिब ने यमुना नदी के तट पर सुंदर प्राकृतिक पृष्ठभूमि में 'पाउंटा' नगर बसाया। 'पाउंटा' का अर्थ है--पैर रखने की जगह। यहां भी गुरु जी की स्मृति में एक सुंदर गुरुद्वारा साहिब स्थित है। यहां के रमणीक वातावरण में गुरु जी ने बाणी-रचना की। यहीं माता सुंदरी जी की कोख से साहिबजादा अजीत सिंघ जी ने जन्म लिया।

पाउंटा साहिब से लगभग १५ किलोमीटर दूर भंगाणी नामक स्थान पर गुरु साहिब ने राजा भीमचंद, फतेहशाह व अन्य पहाड़ी राजाओं को पराजित किया। पाउंटा साहिब से वापिस अनंदपुर साहिब जाते हुए गुरु जी कपालमोचन, साढौरा, बीड़माजरा, लाहड़पुर होते हुए टोका गांव पहुंचे। बाद में यह गांव 'टोका साहिब' कहलाया। गुरु जी के टोका प्रवास के दौरान भंगाणी की लड़ाई में घायल हुए उनके दो योद्धाओं ने दम तोड़ दिया। उन्होंने दोनों का अंतिम संस्कार टोका साहिब सरोवर के किनारे अपने हस्त-कमलों से किया ऐसा

**एस. ए. जैन कॉलेज, अंबाला शहर (हरियाणा)*

माना जाता है। जिन किल्लों (खूटों) से गुरु जी ने घोड़े बांधे थे वे कालांतर में हरे हो गये, ऐसा लोकविश्वास है। यहां अब जामुन के चार विशाल वृक्ष मौजूद हैं। उसी समय का लगाया गया आम का एक विशाल पेड़ भी यहां की शोभा बढ़ा रहा है। गुरुद्वारा साहिब परिसर में महाराजा रणजीत सिंघ के सेनापति नवाब फतेह सिंघ आहलूवालिया द्वारा सन् १८८० में निर्मित एक कुआं भी मौजूद है।

गुरुद्वारा टोका साहिब बरसाती रूण (संभवत: अरुण नदी का अपभ्रंश) नदी के तट पर स्थित है। बरसातों में हरियाणा की ओर से आने वाली संगत को होने वाली परेशानी को देखते हुए परलोक वासी बाबा हरबंस सिंघ जी कार सेवा वालों ने श्रद्धालुओं के सहयोग से नदी पर एक पुल का निर्माण करा दिया था। गुरुद्वारा परिसर में पवित्र सरोवर के चहुं ओर पक्का गलियारा बना दिया गया है। निकटवर्ती पहाड़ी पर गुरुद्वारा तप स्थान साहिब बना हुआ है।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने शिवालिक पर्वतमाला की गोद में स्थित इस मनोरम स्थल पर १३ दिन विश्राम किया। गुरु जी की चरण-धूल से पवित्र हुए स्थान पर निर्मित गुरुद्वारा टोका साहिब में श्रद्धालु आम दिनों के अलावा प्रत्येक रविवार व पूर्णमाशी के दिन भारी संख्या में आते हैं और स्वयं को धन्य मानते हैं। गुरु जी की विभिन्न निशानियां चित्रों के साथ यहां श्रद्धा-भाव से संजो कर रखी गयी हैं। वैसाखी पर लगने वाले मेले में सभी धर्मों के श्रद्धालु यहां शीश झुकाने पहुंचते हैं। प्रत्येक पूर्णमाशी को लगने वाले मेले में चेचीमाजरा, मियांपुर, कुल्लड़पुर, खानपुर, संग्रहणी, पंचौड़ी, हमीदपुर, बरौली, लुबाणा, टोका, मिरपुर व कोटला गांव के श्रद्धालु बारी-बारी से सेवा कर सेवा-प्रसाद पाते हैं। इस पावन स्थान पर आकर यहां से वापिस लौटने की सुधि नहीं रहती।



सिक्ख नसलकुशी : नवंबर १९८४ *(पृष्ठ ४८ का शेष)*

पहले विदेशों से अनाज आयात करना पड़ता था।

विश्व के सबसे बड़े प्रजातंत्र कहलवाने वाले देश भारत के इतिहास के काले अध्याय के रूप में घटित नवंबर १९८४ का सिक्ख कत्लेआम देश का एक बहुत बड़ा हादसा एवं त्रासदी थी जिसमें असंख्य मां-बहनें विधवा हो गईं और हजारों की संख्या में अनेकों परिवार बर्बादी की कगार पर जा पहुंचे। पिछले २७ वर्षों से निरंतर उनके पुनर्वास और उनको समुचित राहत पहुंचाने हेतु न तो कभी केंद्र सकरार ने, न ही कभी राज्य सरकारों ने कोई दिलचस्पी दिखाई और न ही कोई प्रयास किया। प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि १० आयोग गठित हुये, हजारों की संख्या में कत्लेआम, लूटपाट, आगजनी हुई, रिपोर्टों एवं शपथ-पत्रों का अंबार लगा, पर आश्चर्य कि २७ वर्ष पश्चात भी कातिल स्वेच्छापूर्वक घूम रहे हैं, ऐसा क्यों?

भारत में पुलिस व प्रशासन की कमान सीधे तौर पर राजनेताओं के हाथ में होती है। सरकार सिक्ख समुदाय के साथ न्याय करने का वायदा तो करती है मगर यह वायदा उन वायदों में से है जो आज तक पूरा नहीं हुआ। सिक्ख समुदाय के साथ न्याय होना समय की आवश्यकता है ताकि देश पर मर-मिटने वाली यह कौम राष्ट्र की मुख्य धारा से पूर्व की भांति निरंतर जुड़ी रहे।



गुरबाणी-संपादन तथा अध्ययन : स्रोत सूचना

*-डॉ. गुरमेल सिंघ**

१. *श्री गुरू ग्रंथ साहिब दी संपादन कला,* डॉ. महिंदर कौर, रब्बी प्रकाशन, दिल्ली-१९७४

२. *गुरबाणी संपादन निरणै,* प्रिं: हरिभजन सिंघ, सतिनाम प्रकाशन, ११८६/१८-सी, चंडीगढ़-१९८१

३. *आदि बीड़ बारे,* प्रो. साहिब सिंघ, भाषा विभाग, पटियाला-१९९०

४. *बाणी बिओरा,* डॉ. चरन सिंघ, खालसा ट्रैक्ट सोसायटी ने १९०२ ई. में 'निरगुणीआरा' द्वारा छापा। डॉ. बलबीर सिंघ ने 'श्री चरणहरि' विस्तार (जिल्द-२, अप्रैल १९४१ ई, मैनेजर, खालसा समाचार, श्री अमृतसर, पन्ना २९८) से संपादित किया।

५. *परम पवित्र आदि बीड़ दा संकलन काल,* ज्ञानी महां सिंघ (संपादक खालसा समाचार), नोट: गिआन जी के ६ लेख खालसा समाचार में छपे। इनको १९५४ ई. में पुस्तक जामा पहनाया गया। यह पुस्तक तथा खालसा समाचार के संबंधित ६ अंक, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला की मुख्य लायब्रेरी तथा भाई वीर सिंघ साहित्य सदन, नई दिल्ली में सुरक्षित हैं।

६. *श्री गुरू ग्रंथ साहिब,* प्रो. पिआरा सिंघ पदम, लोयर माल, पटियाला-१९९७

७. *इतिहास श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी,* (दो-भाग), ज्ञानी गुरदित्त सिंघ, सिक्ख साहित्य संस्थान, चंडीगढ़, मई-१९९०

८. *श्री गुरू ग्रंथ साहिब : एक परिचय,* डॉ. धर्मपाल मैणी, लाहौर बुक शॉप, लुधियाना-१९६२

९. *श्री गुरू ग्रंथ साहिब परिचय,* डॉ. रतन सिंघ (जग्गी), Gobind Sadan, Institute for Advance Studies in Comparative Religion, New Delhi, Dec. 1991

१०. *'गुरू मानियो ग्रंथ',* ज्ञानी भगत सिंघ हीरा, नेशनल बुक शॉप, नई दिल्ली-१९९२

११. *गुरू पद निरणय,* (संपा.) भाई सेवा सिंघ, खालसा समाचार, श्री अमृतसर-१९३४

१२. *गुरू ग्रंथ साहिब : बाणी बिओरा (भाग-१),* ज्ञानी जोगिंदर सिंघ तलवाड़ा, सिंघ ब्रादर्स, श्री अमृतसर

१३. *गुरू विआकरण पंचाइण,* पंडित करतार सिंघ दाखा, प्रकाशक-लेखक खुद, १९४५

१४. *शबदांतर लगां मातरां दे गुज्झे भेद,* प्रिं: तेजा सिंघ, शि: गु: प्र: कमेटी, १९२२-२३

१५. *गुरबाणी विआकरण,* प्रो. साहिब सिंघ, सिंघ ब्रादर्स, श्री अमृतसर

१६. *गुरबाणी दी भाषा ते विआकरण,* डॉ. हरकीरत सिंघ, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१९९७

१७. *गुरबाणी विआकरण दे सरल नेम/शुद्ध उच्चारण,* सिक्ख मिशनरी कॉलेज, लुधियाना (ट्रेक्टनुमा)

१८. *गुरबाणी दा शुद्ध उच्चारण,* ज्ञानी जोगिंदर सिंघ तलवाड़ा, सिंघ ब्रादर्स, श्री अमृतसर

१९. *श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी दी बाणी दा शुद्ध उच्चारण,* धंना सिंघ, पिंगलवाड़ा, श्री अमृतसर, मई-१९९६

२०. *गुरबाणी उचार-भेद,* ज्ञानी बचन सिंघ (सोही), लाहौर बुक शॉप, लुधियाना-१९९७

२१. *गुरबाणी दा शुद्ध उच्चारण,* डॉ. हरकीरत सिंघ तथा इंदर सिंघ, चीफ खालसा दीवान, श्री अमृतसर-१९८५

२२. *गुरबाणी दा उच्चारण,* हरकीरत सिंघ, 'खोज दरपण', अंक-६, १०६-१११, गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी, श्री अमृतसर, जुलाई-१९७६

२३. *समीखिआ शुद्ध गुरबाणी उच्चारण दी,* (संपा.) डॉ. अनोख सिंघ, प्रकाशक, संपादक खुद, चीनी अस्पताल, बीबी वाला रोड, बठिंडा, नवंबर-२०००

(शेष पृष्ठ ५६ पर)

**श्री गुरु ग्रंथ साहिब स्टडीज डिपार्टमेंट, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, मो. : ९०४१०४६३७२*

अवसर न चूको!

-बीबी जसप्रीत कौर 'रावी'*

'समय का स्वरूप कैसा है?' नामक एक कविता को एक यूनानी मूर्तिकार ने पत्थर की मूर्ति में ढाला था, ताकि यह मनुष्य के जीवन के लिये प्रेरणादायी हो और प्रतीक के रूप में मनुष्य के जीवन को एक संदेश दे।

जिस समय विश्व पर सिकंदर की विजय-पताका फहरा रही थी, लिसिप्स नामक इस मूर्तिकार का भी वही उदय-काल था, जिसे बाद में विश्व का सर्वश्रेष्ठ मूर्तिकार माना गया।

समय कभी नहीं रुकता। वह आगे बढ़ता रहता है और अपने पीछे बहुत-सी स्मृतियां, बहुत-से प्रतीक . . . अपने गर्भ में समेटकर उन्हें इतिहास का अंग बना देता है।

वह मूर्ति भी समय के गर्भ में आज न जाने कहां दफन होगी! कुछ लोगों ने उसे अवश्य ही देखा होगा, किन्तु कैलिस्ट्रोटस नामक व्यक्ति ने केवल उसका चित्र ही देखा था और अपने शब्दों में उसने उसका वर्णन इस प्रकार किया था : "अवसर एक सुंदर युवक है। उसका अंग-अंग यौवन की मस्ती से चूर है। उसका चेहरा अत्यधिक आकर्षक है। लंबे बाल उसके आकर्षण को और अधिक बढ़ाते हैं। उसका माथा एक अनोखे तेज से चमकता रहता है। उसके गाल यौवन की आभा से दमक रहे हैं। वह इस प्रकार खड़ा है, मानो अभी उड़ने वाला हो। इस मुद्रा में उसके पैरों की केवल उंगलियां व अंगूठा ही पृथ्वी पर टिके हैं। उसके शरीर पर परियों की भांति पंख हैं। लंबे काले बालों का गुच्छा उसके माथे पर लहरा रहा है, परंतु सिर के पीछे का हिस्सा केश-विहीन अर्थात् बिलकुल गंजा है। कैलिस्ट्रोटस ने जिस खास बात का जिक्र किया है वो है कि उसके हाथ में एक उस्तरा भी था।

भूमि पर खड़े होने का एक निराला अंदाज, माथे पर लटें और पीछे से गंजापन तथा हाथ में उस्तरा, आखिर कौन है यह?

किसी ने उससे पूछा, "तुम कौन हो?"

तब उसने अपनी रौबीली आवाज में बताया, "मैं समय हूं। मैं सबको अपने वश में कर सकता हूं।"

वह व्यक्ति तो उसके रूप और उसकी मुद्रा को देखकर अत्यधिक प्रभावित था। उसने पुन: पूछा, "मगर तुम इस प्रकार पैरों के पंजों पर क्यों खड़े हो।"

"क्योंकि मैं हमेशा गतिशील रहता हूं।"

"पर तुम्हारे शरीर पर ये पंख कैसे हैं? क्यों हैं?"

"मेरे शरीर पर ये पंख इसलिये हैं क्योंकि मुझे गतिशील रहने के लिये तेज उड़ना पड़ता है।"

"और तुम्हारे हाथ में जो यह उस्तरा है, इसका क्या अर्थ है?"

"हे भोले मानव! यह इसलिये है कि लोगों को हमेशा यह याद रहे कि मुझसे अधिक तेज धार वाला इस संसार में और कोई नहीं है।"

"तुम्हारे ये बाल तुम्हारे माथे पर क्यों लटक रहे हैं?"

"मुझे इन्हीं से पकड़ा जा सकता है . . . जो चाहे मुझे पकड़ ले।"

"मगर तुम्हारे सिर के पिछले भाग में तो बाल हैं ही नहीं।"

"ऐसा इसलिये है कि जब मैं उड़ने लगूं तो कोई पीछे से मुझे पकड़ न सके।"

"तुम्हारा रूप इतना सुंदर क्यों है?"

"हे अंजान व्यक्ति! मेरा रूप सुंदर इसलिये है ताकि हर इंसान मुझे चाहे, मुझे पकड़ने की चेष्टा करे। मुझे वही पकड़ पाते हैं जो कर्मठ हैं, जो गतिशील रहते हैं, जो अवसर को पहचानते हैं।"

कहने का तात्पर्य यह है कि अवसर यदि मिले तो आत्मविश्वास को नहीं खोने देना चाहिये। दृढ़-आत्मविश्वास से भी काफी हद तक सफलता प्राप्त की जा सकती है।



*मकान नं. ११, सेक्टर १-ए, गुरु ज्ञान विहार, डुगरी, लुधियाना।

दिसंबर २००९ में प्रकाशित 'गुरसिक्खी बारीक है-७' से आगे . . .

गुरसिक्खी बारीक है-८

*-डॉ सत्येंद्रपाल सिंघ**

गुरु नानक साहिब से आरंभ होकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तक अपनी दिव्य यात्रा सम्पूर्ण करने वाली परम ज्योति श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंतिम रूप से समाहित होकर, ज्ञान के प्रकाश का अमर स्रोत बनकर, मानव जीवन के सर्वकल्याण और उद्धार का जीवन अमृत हर आने वाले की झोली में डालकर भरपूर उपकृत कर रही है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जीवन के हर प्रश्न का समाधान है, प्रत्येक शंका का निवारण है और साफ-सुथरी जीवन-पद्धति का सुझाव है जिसे अपनाकर परमात्मा को पाया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समक्ष आदर-भाव से माथा टेकता है वह श्रद्धालु है; जो व्यक्ति श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षाओं को सुनता है वह सिक्ख है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षाओं को समझने की इच्छा रखने वाला गुरमुख और उन शिक्षाओं को अंगीकार करके उन्हें अपने आचरण में उतारने वाला गुरसिक्ख है। गुरु दरबार बिना किसी भेदभाव के सबके लिये खुला है। उस ऊंचे और सच्चे दरबार से मनुष्य क्या पाना चाहता है और क्या बनना चाहता है, यह उस के संजीदा प्रयासों पर निर्भर करता है। पूर्ण उद्धार गुरसिक्ख बनने में ही है और उसके लिये मन में श्रद्धा, जानने व समझने की इच्छा होना आवश्यक है। इसके बाद जब मन में सद्भावना का संकल्प जागृत हो जाता है तो एक गुरसिक्ख के विकास की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है। एक सिक्ख जीवन भर श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शिक्षाओं पर दृढ़तापूर्वक चलता रहता है और उसका गुरसिक्खी का स्वरूप परिष्कृत होता रहता है। इसी लिये महान सिक्ख दार्शनिक भाई गुरदास जी ने सिक्खी के मार्ग को कठिन बताया। इस मार्ग पर प्रतिपल गुरसिक्ख की परीक्षा है जो उसे अपने आचरण से पास करनी है :

वालहु निकी आखीऐ खंडे धारहु सुणीऐ तिखी।
आखणि आखि न सकीऐ लेख अलेख न जाई लिखी।
गुरमुखि पंथु वखाणीऐ अपड़ि न सकै इकतु विखी। *(वार २८:१)*

भाई गुरदास जी ने गुरसिक्खी के मार्ग को बाल से भी बारीक और तेग की धार से भी तीक्ष्ण बताते हुए कहा कि इस मार्ग पर तो एक कदम भी चलना कठिन है। इस कठिनता को शब्दों में लिखा और बताया नहीं जा सकता। गुरसिक्खी का मार्ग इसलिये कठिन नहीं है कि इसमें मनुष्य को कोई बड़ी योग-साधना, तप, व्रत आदि करना है अथवा भौतिकता का त्याग करके वनवासी हो जाना है, कंदराओं में रहना है। गुरु-शिक्षाएं तो इसके विपरीत हैं। भाई गुरदास जी ने मार्ग को कठिन इसलिये कहा है कि यह सच का मार्ग है, शुद्धता का मार्ग है, जबकि मनुष्य विकारों और अवगुणों से भरा पड़ा है और इन अवगुणों का त्याग करना अत्यंत कठिन है।

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो : ९४१५९६०५३३*

हम अंधुले अंध बिखै बिखु राते किउ चालह गुर चाली ॥
सतगुरु दइआ करे सुखदाता हम लावै आपन पाली ॥१॥
गुरसिख मीत चलहु गुर चाली ॥
जो गुरु कहै सोई भल मानहु हरि हरि कथा निराली ॥ *(पन्ना ६६७)*

मनुष्य तो अज्ञान के अंधकार में डूबा हुआ है। उसकी दृष्टि माया और विकारों के बंधन में बंधी हुई है। उसके विकार उसकी दृष्टि को खुलने ही नहीं देते। दृष्टिहीन मनुष्य गुरु के मार्ग पर कैसे चल सकता है? भाई गुरदास जी ने सत्य ही कहा है कि ज्ञान के अंधे के लिये तो एक कदम भी चलना संभव नहीं है। जिस तरह एक दृष्टिहीन मनुष्य किसी का सहारा लेकर अपनी राह पूरी करता है उसी तरह अवगुणों से भरा हुआ भी, सतिगुरु की दया से उसका पल्ला पकड़ कर, उसकी ओट लेकर उसकी राह पर चल सकता है। मनुष्य के लिए जीवन भर उसका सहारा लेकर चलना है। जहां भी उसका साथ छोड़ा, मार्ग से भटकना निश्चित है। जीवन भर सतिगुरु का हाथ पकड़ कर चलना ही परीक्षा है और सतिगुरु से अपने संबंध को मजबूत करते जाना ही गुरसिक्खी स्वरूप का परिष्कार होते जाना है, क्योंकि माया का ऐसा प्रसार है जो हर पल मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है।

मनि बिलासु बहु रंगु घणा द्रिसटि भूलि खुसीआ ॥
छत्रधार बादिसाहीआ विचि सहसे परीआ ॥
(पन्ना ४२)

माया मन में अनेक प्रकार के झूठे आनंद भर देती है, मान-सम्मान, शक्ति-सत्ता के गर्व में मन उलझ जाता है, किंतु ये सारी उपलब्धियां दुख ही देने वाली हैं और परमात्मा से दूर करने वाली हैं। ऐसे मनुष्य का जीवन व्यर्थ चला जाता है और वह आवागमन के दुख सहता रहता है।

डाली लागै निहफलु जाइ ॥
अंधी कंमी अंध सजाइ ॥
मनमुखु अंधा ठउर न पाइ ॥
बिसटा का कीड़ा बिसटा माहि पचाइ ॥
(पन्ना ३६२)

सतिगुरु ने माया के प्रसार की तुलना वृक्ष की टहनी से की है। टहनी वृक्ष का ही विस्तार है किंतु वृक्ष नहीं है। अज्ञानी मनुष्य टहनी को ही वृक्ष मान लेता है और माया में रम कर उसके बाहरी सुखों-सुविधाओं को ही जीवन का वास्तविक व उद्देश्य बना लेता है। इस अज्ञानता के कारण उसकी दृष्टि संकुचित ही रह जाती है, वह सच को जान और समझ नहीं पाता है। परिणामस्वरूप माया उसके जीवन के वास्तविक मनोरथ को मिट्टी में मिला देती है। जो गुरु की ओर उन्मुख नहीं है, जिसके मन में गुरु का पल्ला पकड़ कर राह पार कर लेने की भावना नहीं है, ऐसा मनुष्य अपने मन की मानता रहता है और दुख ही पाता रहता है; कितने भी प्रयास कर ले, सुख ऐसे मनुष्य से दूर ही रहते हैं :

बहु करम करे सतिगुरु नही पाइआ ॥
बिनु गुर भरमि भूले बहु माइआ ॥
हउमै ममता बहु मोहु वधाइआ ॥
दूजै भाइ मनमुखि दुखु पाइआ ॥
(पन्ना १२६१)

माया का मोह सबसे बड़ी अपंगता है जो मनुष्य को परमात्मा की राह पर नहीं चलने देती। यह मनुष्य को इस तरह मुग्ध करती है कि उसकी समूची चेतना का हरण कर लेती है और उसका पूरा जीवन हैरान-परेशान होते ही

व्यर्थ चला जाता है।

माइआ मोहु अगिआनु गुबारु ॥
मनमुख मोहे मुगध गवार ॥
अनदिनु धंधा करत विहाइ ॥
मरि मरि जंमहि मिलै सजाइ ॥२॥
(पन्ना १२६२)

माया के मोह से बचकर अज्ञान के अंधकार से उबरने के लिये गुरमुख बनना आवश्यक है। यही एक निदान है जो मन में सच्चा आनंद और सुख भर सकता है। इस आनंद-सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता। जिसने इसे पाया है वही इसका अनुभव कर सकता है :

सिल आलूणी चटणी तुलि न लख अमिअ रस इखी।
गुरमुखि सुख फलु पाइआ भाइ भगति विरली जु बिरखी।
सतिगुर तुठै पाईऐ साधसंगति गुरमति गुरसिखी।
चारि पदारथ भिखक भिखी ॥ (वार २८:१)

भाई गुरदास जी गुरसिक्खी को नमक से भरी सिल चाटने जैसा इसलिये कहते हैं क्योंकि जो माया में रमे हुए हैं उन्हें माया के मोह को तोड़कर गुरसिक्खी के मार्ग को अपनाना नमक की सिल चाटने जैसा ही लगता है, जब तक वे इस सिल को चाट नहीं लेते। माया के मोह को छोड़ना आसान नहीं। मनुष्य को इसमें त्वरित सुख दिखते हैं। अपनी सोच, अपनी परिभाषाएं उसे वास्तविक आनंद से दूर रखती हैं। एक बार माया के बंधनों के पार आकर जब सच्चा ज्ञान उसकी दृष्टि में समा जाता है और वह सतिगुरु का दामन थाम लेता है तो परमात्मा के प्रेम की असीम मिठास उसके मन-तन में भर जाती है और इस कठिनता के मार्ग में उसे सहजता दिखने लगती है। इस राह पर कदम रखते ही सारी स्थितियां बदल जाती हैं जिनका बड़ा ही सुंदर वर्णन निम्न गुरु-वचनों में मिलता है :

अनंदु भइआ मेरी माए सतिगुरू मै पाइआ ॥
सतिगुरु त पाइआ सहज सेती मनि वजीआ वाधाईआ ॥
राग रतन परवार परीआ सबद गावण आईआ ॥
सबदो त गावहु हरी केरा मनि जिनी वसाइआ ॥
कहै नानकु अनंदु होआ सतिगुरू मै पाइआ ॥
(पन्ना ९१७)

मनमुख की अवस्था से निकल कर अपनी सोच, अपने मन के आवेगों को त्याग कर जब मनुष्य गुरमुख होता है, उसके विचारों और आदेशों से स्वयं को जोड़ने लगता है तो उसका संसार बदल जाता है, क्योंकि वह परमात्मा के अनुकूल हो जाता है। परमात्मा तथा परमात्मा द्वारा रचित सारी सृष्टि उसके अनुकूल होकर सारे विरोधाभासों और संशयों को समाप्त कर देती है। यह अनुकूलता उसे सच्चे आनंद का अनुभव कराती है। उसकी दृष्टि सम हो जाती है, मन में कोई वैर-विरोध नहीं रहता और यह आनंद उसे समस्त विकारों से ऊपर उठा देता है। मनुष्य को इस आनंद में यह इच्छा धारण करनी चाहिये कि वह इस मार्ग से कभी विरत न हो :

ए मन मेरिआ तू सदा रहु हरि नाले ॥
हरि नालि रहु तू मंन मेरे दूख सभि विसारणा ॥
अंगीकारु ओहु करे तेरा कारज सभि सवारणा ॥
सभना गला समरथु सुआमी सो किउ मनहु विसारे ॥
कहै नानकु मंन मेरे सदा रहु हरि नाले ॥
(पन्ना ९१७)

परमात्मा के मार्ग पर कदम रखते, सतिगुरु की ओर उन्मुख होते हुए जिस आनंद की प्राप्ति

होती है उससे सतिगुरु की असीम शक्ति का एहसास हो जाता है और मनुष्य उस सच्ची तथा व्यापक सत्ता से सदैव जुड़े रहने को संकल्पबद्ध होता है। मनुष्य स्वयं से प्रश्न करता है कि जो सतिगुरु हर तरह से समर्थ है, जिसके वश में सब कुछ है और जो सभी का उद्धार करने वाला है उसे क्यों न सदा के लिये अपने मन में बसा लें और कभी भी उसे विस्मृत न होने दें। सारे सुखों का दाता, सारे दुखों, रोगों का हरण करने वाला, समस्त विघ्न-बाधाओं से पार उतारने वाला, सदा-सर्वदा सहायक, मन में आनंद और विश्वास पैदा करने वाला सतिगुरु सदैव मन में निवास करके ज्ञान का प्रकाश देता रहे, ऐसी कामना के साथ ही एक गुरमुख परमात्मा के मार्ग पर कदम आगे बढ़ा सकता है। ऐसा विश्वास जितना दृढ़ होगा, मार्ग से विचलन की संभावनाएं उतनी ही कम होंगी। यह भी सदैव समझना होगा कि गुरसिक्खी का मार्ग बाल से भी बारीक और खड़ग की धार से भी अधिक तीखा है। यह मार्ग बारीक और तीक्ष्ण इसलिये है क्योंकि यह विश्वास और आचरण का मार्ग है। मनुष्य मन में किन भावों को धारण करे और उन भावों के अनुरूप कैसे आचरण करे, इसे जानना ही गुरसिक्खी है और यह श्री गुरु ग्रंथ साहिब की शरण में जाकर ही समझा जा सकता है।



गुरबाणी-संपादन तथा अध्ययन : स्रोत सूचना

(पृष्ठ ५१ का शेष)

२४. *गुरबाणी उच्चारण-समीखिआ,* डॉ. हरकीरत सिंघ-इंदर सिंघ, अध्यात्म विचार केंद्र, श्री अमृतसर-१९९३

२५. *नवीन गुरबाणी विआकरण,* ज्ञानी हरबंस सिंघ निरणैकार, गुरमति निरणै भवन, चंडीगढ़

२६. *गुरबाणी दी भाषा दा विभकतीमूलक सरूप,* डॉ. प्रेम प्रकाश सिंह, पुस्तक 'रूप-विगिआन अते पंजाबी शबद रचना' में अध्याय-१७, पन्ना-१५०, मदान पब्लिकेशन, पटियाला-२००२

२७. *गुरबाणी दे उच्चारण,* अर्थों एवं मर्यादा सम्बंधी पाये गए भ्रमों का गुरमति आशय के अनुसार निर्णय, संप्रदाय भिंडरां, अक्तूबर-२०००

२८. *गुरमत निरणय दे अधार ते संखेप बाणी विआकरण,* बाबा निरंजन सिंघ तथा ज्ञानी मोहन सिंघ (भाटिया), लाहौर बुक शॉप-१९४२ (१९४५ चौथी बार)

२९. *गुरू ग्रंथ साहिब दी कोशकारी,* प्रो. हरनाम सिंघ शान, भाषा विभाग, पटियाला-१९९४

३०. *गुरबाणी दीआं विआखिआ प्रणालीआं,* डॉ. तारन सिंघ, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला

३१. *टीकाकारी, इतिहासकारी ते पत्तरकारी : कुझ द्रिशटीकोण, (सेमीनार पेपर),* (संपा.) डॉ. अमरजीत सिंघ, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१९८९

३२. *'नानक प्रकाश' पत्रिका का विशेष अंक,* जिल्द-८वीं, अंक-२, दिसंबर-१९७६, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला

३३. *गुरबाणी का नागरी लिप्यांतरण,* Dr. Harkeert Singh, Institute of Sikh Studies, Chandigarh-2000

३४. *Grammer to the Adi Granth,* Dr. Ernest Trump, 1873

३५. *Guru Granth Sahib : Interpretation, Meaning and Nature,* Dr. Gurnek Singh, National Book Shop, 32-B, Chandni Chowk, Delhi.

३६. *Guru Gobind Singh's Deat at Nanded : An examination of sucession theories :* Dr. Ganda Singh, Guru Nanak Foundation, Faridkot-1972



गुरबाणी चिंतनधारा : ५३

सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ मनजीत कौर**

प्रभ कउ सिमरहि से धनवंते ॥
प्रभ कउ सिमरहि से पतिवंते ॥
प्रभ कउ सिमरहि से जन परवान ॥
प्रभ कउ सिमरहि से पुरख प्रधान ॥
प्रभ कउ सिमरहि सि बेमुहताजे ॥
प्रभ कउ सिमरहि सि सरब के राजे ॥
प्रभ कउ सिमरहि से सुखवासी ॥
प्रभ कउ सिमरहि सदा अबिनासी ॥
सिमरन ते लागे जिन आपि दइआला ॥
नानक जन की मंगै रवाला ॥५॥

श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि परमेश्वर का जो सिमरन करते हैं वे धनवान हैं। प्रभु का सिमरन करने वाले ही मान-सम्मान वाले हैं। प्रभु का सिमरन करने वाले ही स्वीकृत अर्थात् प्रवान हैं और वही सब मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं। प्रभु का सिमरन करने वाले बेमुहताज होते हैं अर्थात् उन्हें दुनिया में किसी की मोहताजी नहीं होती। वे तो शहंशाह होते हैं और सब उनकी आज्ञा का पालन करते हैं। जो ईश्वर का सिमरन करते हैं वे सदैव सुखी रहते हैं। जो प्रभु की आराधना करते हैं वे सदैव स्थिर रहते हैं अर्थात् आवागमन से मुक्त हो जाते हैं। परमेश्वर के सिमरन में वही जुड़ते हैं जिन पर प्रभु स्वयं मेहरबान होते हैं अर्थात् जिस मनुष्य पर कृपा निधान पारब्रह्म परमेश्वर कृपा-दृष्टि करता है वही उसका सिमरन करने में समर्थ होता है। श्री गुरु अरजन देव जी ऐसे (प्रभु-सिमरन में लीन) गुरमुख-प्यारों की चरण-धूल की याचना करते हैं।

प्रभु-सिमरन में लीन मनुष्य ही वास्तव में धनी हैं, क्योंकि उन्हीं के पास सदा कायम रहने वाला नाम-खजाना है। वे ही असल में सम्मान वाले हैं जिनके पास सिमरन रूपी संपत्ति है, क्योंकि दुनिया द्वारा प्राप्त मान-सम्मान आज है, कल नहीं भी हो सकता। नाम-सिमरन से प्राप्त मान-सम्मान सदैव कायम रहने वाला है। वे ही स्वतंत्र जीवन वाले आवागमन से पूर्णतया मुक्त एवं प्रसंनचित्त व सदैव सुखी जीवन वाले हैं। ईश्वर की अपार कृपा से सिमरन रूपी धन की प्राप्ति होती है। प्रभु-सिमरन का महत्व गुरबाणी में बहुतायत से दर्शाया गया है। सिमरन की बरकतों का सदका भटकना का निवारण, दुखों-कलेशों का हरण तथा अनचाहे दुखों से छुटकारा हो जाता है। गुरबाणी का अन्यत्र प्रमाण है :

नरक निवारै दुख हरै तूटहि अनिक कलेस ॥
मीचु हुटै जम ते छुटै हरि कीरतन परवेस ॥
भउ बिनसै अंम्रितु रसै रंगि रते निरंकार ॥
दुख दारिद अपवित्रता नासहि नाम अधार ॥
(पन्ना २९७)

ऐसे प्रभु-सिमरन में जुड़े गुरमुख प्यारों की चरण-धूल की याचना गुरबाणी में की गई है:

गुरसिखां की हरि धूड़ि देहि हम पापी भी गति पांहि ॥ (पन्ना १४२४)

प्रभ कउ सिमरहि से परउपकारी ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन सद बलिहारी ॥
प्रभ कउ सिमरहि से मुख सुहावे ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन सूखि बिहावै ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन आतमु जीता ॥

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मोः ९९२९७-६२५२३*

प्रभ कउ सिमरहि तिन निरमल रीता ॥
प्रभ कउ सिमरहि तिन अनद घनेरे ॥
प्रभ कउ सिमरहि बसहि हरि नेरे ॥
संत क्रिपा ते अनदिनु जागि ॥
नानक सिमरनु पूरै भागि ॥६॥

प्रभु-सिमरन की महिमा का बखान करते हुए पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि प्रभु का सिमरन करने वाले परोपकारी जीवन वाले हो जाते हैं अर्थात् जो इंसान परमेश्वर का सिमरन करता है वह पर-सेवा के लिए जीता है, दूसरों का भला करना ही उसके जीवन का परम लक्ष्य हो जाता है। प्रभु का सिमरन करने वालों पर से मैं बलिहार (कुर्बान) जाता हूं। प्रभु का सिमरन करने वालों के मुख शोभायुक्त अर्थात् सुंदर लगते हैं तथा उनका जीवन सुखपूर्वक व्यतीत होता है। प्रभु-सिमरन करने वाले अपने मन को जीत लेते हैं अर्थात् वे *"मनि जीतै जगु जीतु"* वाली उच्च अवस्था के मालिक बन जाते हैं। सिमरन की बदौलत उनका जीवन जीने का ढंग भी पवित्र हो जाता है। प्रभु-सिमरन में लगे मनुष्यों को गहन आनंद की अनुभूति होती है। प्रभु-सिमरन के कारण वे सदैव प्रभु की हजूरी में रहते हैं। संतों की कृपा से ही हर पल प्रभु-सिमरन करने की चेतनता (सजगता) बनी रहती है। गुरु पंचम पातशाह पावन संदेश देते हैं कि प्रभु-सिमरन की प्राप्ति पूर्ण भाग्यवान मनुष्यों को ही होती है।

प्रभ कै सिमरनि कारज पूरे ॥
प्रभ कै सिमरनि कबहु न झूरे ॥
प्रभ कै सिमरनि हरि गुन बानी ॥
प्रभ कै सिमरनि सहजि समानी ॥
प्रभ कै सिमरनि निहचल आसनु ॥
प्रभ कै सिमरनि कमल बिगासनु ॥
प्रभ कै सिमरनि अनहद झुनकार ॥
सुखु प्रभ सिमरन का अंतु न पार ॥
सिमरहि से जन जिन कउ प्रभ मइआ ॥
नानक तिन जन सरनी पइआ ॥७॥

पहली असटपदी की सातवीं पउड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी प्रभु-सिमरन के महत्व को प्रतिपादित करते हुए पावन उपदेश करते हैं कि प्रभु का सिमरन करने से समस्त कार्य सफल और संपूर्ण होते है। सिमरन करने वाले कभी चिंता एवं पश्चाताप में नहीं रहते। सिमरन करने वाले जीव प्रभु के गुण गायन करने के आदी हो जाते हैं अर्थात् सिमरन करने वालों को प्रभु-स्तुति की आदत हो जाती है। शुभ कर्मों के संस्कारों वाले स्वभाव में तबदील होने के कारण सिमरन करने वाले सहजावस्था में स्थिर रहते हैं अर्थात् सहजता उनके जीवन का स्वाभाविक गुण बन जाती है। प्रभु का सिमरन करने वालों के मन रूपी आसन अडोल हो जाते हैं अर्थात् उन्हें अटल ठिकाना (स्थान) प्राप्त हो जाता है। सिमरन की बरकतों से हृदय रूपी कमल खिल उठता है। प्रभु-सिमरन से अनहद नाद गूंज उठता है अर्थात् एकरस संगीत के वाद्य-यंत्रों की मीठी व सरस धुनें हृदय को रसान्वित करती रहती हैं। प्रभु-सिमरन से जो सुख, शांति एवं सकून प्राप्त होता है वह कदाचित खत्म नहीं होता अर्थात् वह आलौकिक आनंद सदैव कायम रहता है।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि वास्तव में वही इंसान प्रभु का सिमरन करते हैं जिन पर अकाल पुरख की कृपा होती है और कृपा उसी पर होती है जो उसकी कृपा का पात्र बनता है।

हरि सिमरनु करि भगत प्रगटाए ॥
हरि सिमरनि लगि वेद उपाए ॥
हरि सिमरनि भए सिध जती दाते ॥
हरि सिमरनि नीच चहु कुंट जाते ॥
हरि सिमरनि धारी सभ धरना ॥

सिमरि सिमरि हरि कारन करना ॥
हरि सिमरनि कीओ सगल अकारा ॥
हरि सिमरनि महि आपि निरंकारा ॥
करि किरपा जिसु आपि बुझाइआ ॥
नानक गुरमुखि हरि सिमरनु तिनि पाइआ ॥८॥१॥

पहली असटपदी की अंतिम पउड़ी में पंचम पातशाह सिमरन के महत्व को प्रतिपादित करते हुए स्पष्ट करते हैं कि प्रभु-सिमरन की बदौलत इंसान कितने महत्वपूर्ण पदों एवं अवस्थाओं को प्राप्त कर लेता है। श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि प्रभु का सिमरन करने वाला भक्त-जन जगत में ख्याति प्राप्त कर लेता है अर्थात् संसार में प्रसिद्धि पा लेता है। प्रभु-सिमरन में लग कर ही वेदों की रचना हुई। प्रभु-सिमरन में चित्त को जोड़कर ही ऋषियों-मुनियों ने वेद आदि धर्म-ग्रंथों की रचना की। प्रभु-सिमरन द्वारा ही मनुष्य सिध पुरुष, जती अर्थात् अपनी इंद्रियों को वश में रखने वाले बन गए। दानी (दानशीलता) का गुण भी सिमरन की बदौलत ही आया। सिमरन की बदौलत ही नीच, अधम कहलाने वाले मनुष्य विश्व भर में प्रसिद्धि पा गए। प्रभु-सिमरन से सारी पृथ्वी को आश्रय मिला, इसलिए उस सृजनहार व सबको आश्रय देने वाले परमेश्वर का सिमरन करना चाहिए। वह निराकार (निर्गुण स्वरूप) प्रभु-सिमरन में ही समाया हुआ है अर्थात् प्रभु-सिमरन का ही सर्वस्व फैलाव है। प्रभु-सिमरन ने ही समस्त आकारों की रचना की है और वह निराकार प्रभु स्वयं सर्वत्र में बसता है। गुरदेव स्पष्ट करते हैं कि जहां भी प्रभु का सिमरन होता है प्रभु वहीं निवास करते हैं। पंचम पातशाह के चिंतनानुसार वह अकाल पुरख स्वयं जिस पर अपनी कृपा-दृष्टि करते हैं उसे ही सतिगुरु द्वारा प्रभु-सिमरन की बख्शिश प्राप्त होती है अर्थात् जिस पर कृपालु ईश्वर की रहमत होती है उसे ही यह रहस्य समझ में आता है कि सिमरन में ही समस्त सुख समाये हुए हैं। सिमरन करके ही मनुष्य उच्चावस्था को सहजता से प्राप्त कर लेता है।

इतिहास में अनेकों ही उदाहरण हैं जिससे स्पष्ट होता है कि सिमरन से कितने उत्तम पद की प्राप्ति हो जाती है। रत्नाकर डाकू सिमरन की बदौलत बाल्मीकि हो गए, जिन्होंने रामायण की रचना की। ध्रुव, प्रहलाद जैसे अबोध बालकों ने प्रभु-सिमरन से अटल पद की प्राप्ति की। यही नहीं, ईश्वर ने प्रत्यक्ष रूप में उन्हें दर्शन भी दिये। प्रभु-सिमरन की युक्ति कैसी हो? यह समझाने हेतु भक्त कबीर जी ने भक्त ध्रुव एवं भक्त प्रहलाद के उदाहरण देकर कलयुगी जीवों का मार्ग प्रशस्त किया। बाणी प्रमाण है :

राम जपउ जीअ ऐसे ऐसे ॥
ध्रू प्रहिलाद जपिओ हरि जैसे ॥ (पन्ना ३३७)

पहली संपूर्ण असटपदी में प्रभु-सिमरन की महिमा का ही बखान किया गया है। गुरबाणी में अन्यत्र प्रमाण है कि ऐसे गुरमुख प्यारों की चरण-धूल नसीब हो जो स्वयं प्रभु-सिमरन में जुड़े हैं तथा औरों को भी प्रभु-सिमरन हेतु प्रेरित करते हैं, यथा :

जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ (पन्ना ३०६)

असटपदी दूसरी

सलोकु ॥

दीन दरद दुख भंजना घटि घटि नाथ अनाथ ॥
सरणि तुम्हारी आइओ नानक के प्रभ साथ ॥१॥
(पन्ना २६३-६४)

प्रस्तुत सलोक में गुरु पंचम पातशाह परवरदिगार के चरणों में अरदास विनती करते हुए फरमान करते हैं कि हे दीन-दुखियों के दुखों एवं कष्टों का (समूल) नाश करने वाले तथा

हर घट में बसने वाले अनाथों के नाथ प्रभु! मैं तुम्हारी शरण में आया हूं अर्थात् मैं गुरु का सहारा लेकर आपकी शरण आया हूं। प्रो. साहिब सिंघ एवं स. तेजा सिंघ जैसे महान चिंतकों ने इन पंक्तियों में स्पष्ट किया है कि पंचम पातशाह श्री गुरु नानक देव जी जी का आसरा लेकर परमेश्वर की शरण आए हैं, जिससे गुरबाणी का यह गूढ़ रहस्य स्पष्ट होता है कि पूर्ण गुरु की मध्यस्थता अनिवार्य है। संपूर्ण श्रेष्ठ प्राप्तियों का श्रेय गुरु को जाने से जीव अहंकार जैसे दीर्घ रोग से पूर्णतया मुक्त रह सकता है।

असटपदी ॥

जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥
जह महा भइआन दूत जम दलै ॥
तह केवल नामु संगि तेरै चलै ॥
जह मुसकल होवै अति भारी ॥
हरि को नामु खिनु माहि उधारी ॥
अनिक पुनहचरन करत नही तरै ॥
हरि को नामु कोटि पाप परहरै ॥
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे ॥
नानक पावहु सूख घनेरे ॥१॥

दूसरी असटपदी की पहली पउड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी मन को प्रबोधित करते हुए, कलयुगी जीवों का मार्गदर्शन करते हुए फरमान करते हैं कि हे मन! (मालिक की दरगाह में) जहां माता, पिता, पुत्र, मित्र, भाई आदि कोई भी (दुनियावी रिश्तेदार) नहीं होगा वहां प्रभु-नाम ही तेरा वास्तविक सहायक है अर्थात् जहां कोई भी साथ निभाने वाला नहीं वहां परमेश्वर का नाम ही तेरा सच्चा साथी है। जीव के कर्मानुसार जहां अत्यंत भयानक डरावने आकार अनेक कष्ट देते हैं अर्थात् जहां बड़े-बड़े यमदूतों के समूह हैं वहां तेरी कोई पेश नहीं जायेगी, वहां तो केवल प्रभु का नाम ही तेरे साथ जा सकता है। जहां तेरे समक्ष अत्यंत कठिनाइयां पेश आयेंगी वहां प्रभु का नाम क्षण भर में तुझे बचा लेगा। अनेकों धार्मिक क्रिया-कलाप करके भी जहां मनुष्य पापों से नहीं बच सकता वहां परमेश्वर का नाम करोड़ों पापों को नष्ट कर देता है अर्थात् प्रभु-नाम में अनेकों पापों को नाश करने की सामर्थ्य है। जहां पापों के लिए अनेक प्रायश्चित करके भी भवसागर से पार उतारा संभव नहीं वहां प्रभु का नाम पलक झपकते सहज स्वभाव ही संसार रूपी भवसागर से पार उतारने में समर्थ है। अत: हे मेरे मन! गुरु के सन्मुख होकर प्रभु का नाम जप, उस परमेश्वर का सिमरन कर, इस तरह तू अनेक सुख प्राप्त कर लेगा। पंचम पातशाह पावन संदेश देते हैं कि गुरु की शरण में आकर प्रभु के नाम की आराधना कर नाम की बरकतों से अनेकों सुखों से तेरी झोली भर जायेगी।

प्रस्तुत पउड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी कलयुगी जीवों को सच्चे सुख की प्राप्ति का मार्ग दर्शाते हुए जगत के संबंधों की निस्सारता की ओर भी संकेत कर रहे हैं, क्योंकि जहां अपना शरीर भी साथ नहीं निभाता वहां सगे-संबंधी कैसे साथ निभा सकते हैं? नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने भी जगत की प्रीति को झूठा बताया है, यथा :

जगत मै झूठी देखी प्रीति ॥
अपने ही सुख सिउ सभ लागे किआ दारा किआ मीत ॥ *(पन्ना ५३६)*

यही नहीं, ये रिश्ते-नाते इस संसार का ही व्यवहार हैं, यह स्पष्ट करते हुए गुरु जी सच्चे परवरदिगार से प्रीति करने को प्रेरित करते हैं :

सभ किछु जीवत को बिवहार ॥
मात पिता भाई सुत बंधप अरु फुनि ग्रिह की नारि ॥ *(पन्ना ५३६)*

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-४६

समर्पित सिक्ख एवं विद्वान : कवि तनसुख

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

कवि तनसुख लाहौर का रहने वाला था। इसने संवत् १७४१ वि. में 'हितोपदेश' ग्रंथ का जन-भाषा में अनुवाद किया था। इसके तीन पुत्र थे। दो बड़े पुत्र मनमुख और नैनसुख उच्च कोटि के विद्वान थे और दशमेश पिता की सेवा में ही रहते थे। तीसरा पुत्र छोटा था।

कवि तनसुख नवम् पातशाह और दशम पातशाह का बड़ा समर्पित सिक्ख था। श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत से इसके मन में बड़ा रोष उत्पन्न हुआ। इसने मौका पाकर संवत् १७३३ वि. (सन् १६७६ ई) में जामा मस्जिद, दिल्ली से घोड़े पर सवार होकर बाहर निकल रहे औरंगजेब पर तेग लेकर हमला कर दिया। यहां तनसुख को गिरफ्तार कर लिया गया। पढ़ा-लिखा विद्वान समझ कर औरंगजेब ने इसे रणथंभौर के किले में कैद कर दिया। इसे मृत्यु-दंड नहीं दिया गया।

दशमेश पिता ने कवि तनसुख को उसके पुत्रों--मनसुख और नैनसुख के हाथ 'हितोपदेश' की पोथी रणथंभौर भिजवाई। 'हितोपदेश' को पढ़ कर कवि तनसुख को ख्याल आया कि क्यों न इस रचना को दोहा-चौपाई शैली में नये सिरे से अनुवाद करके लिखा जाये। इस विचार के अनुसार इसने 'हितोपदेश' का दोहा-चौपाई शैली में जन-भाषा में अनुवाद किया और इस नये ग्रंथ का नाम 'राजनीति ग्रंथ' रखा।

कवि तनसुख ने यह सारा ग्रंथ कैद में ही रहकर संवत् १७४१ वि. (सन् १६८४ ई) में पूरा किया:

संमत सत्रह सै इकतालिस।
औरंगजेबी सन सताइस।
तिह चित लाइ कथा अनुसारी।
बरनत ही अति लगी पिआरी।

कवि तनसुख ने 'राजनीति ग्रंथ' में अपने जीवन के उपर्युक्त प्रसंगों का भी संक्षिप्त वर्णन किया है:

तनसुख छत्री बसै लाहौर।
करम रेख आये थंभौर।
सुत पुन ताके अहै जु तीन।
इक नानो दुइ बडे प्रबीन।
ते भी सेवा गुर की करहिं।
निस बासर गुर गुन उचरहिं।
तिन सो पोथी दई पठाई।
रण थंभौर तनसुख पहि आई।
देखत तां को मन मैं आई।
कीजै यह दोहा चौपाई।
दोहरा
सभ की लाज गोबिंद को, जहिं लग है संसार।
तनसुख मनसुख नैनसुख, हरि जप बारंबार।

कवि तनसुख को पूरी पहचान थी कि किस प्रकार दशमेश पिता कलम और तेग की शक्ति से श्री गुरु नानक साहिब जी की चलाई लहर को मजबूत कर रहे हैं, इसलिए उसने इस महान कार्य में अपना हिस्सा डालते हुए 'हितोपदेश' का अनुवाद करके इसे एक नये ग्रंथ 'राजनीति ग्रंथ' के रूप में दशमेश पिता की सेवा में भेजा:

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१*

कलियुग जबहि अनीति चलाई।
नानक रूप धरिओ हरि आई।
चारों बरन सिख तब कीने।
क्रिपावंत होई इह फल दीने।

साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के विषय में कवि तनसुख लिखता है :

कलिजुग माहि भयो गुर गोबिंद, जिहं सम दूसर अवर न कोई।
रिधि सिधि दोऊ दर ठांढी, निस बासर तिहं आगिआ होई।
मुकति बंध तिहं आइस माही, तातकाल जो करे सु होई।
तनसुख हेइ दरस देखत ही, देहु दरस दुख रहै न कोई।

कवि तनसुख गुरमति के सिद्धांतों से पूर्ण प्रभावित था। जरा उसके द्वारा किया गया गुरु-महिमा-वर्णन देखें :

गुर परमेसर गुर गोबिंद।
गुर दइआल काटै दुख दुंद।
गुर ते पाईऐ सरब निधान।
गुर ते पाइऐ ब्रहम गिआन।
गुर ते आवागमन रहाए।
सरब सूख गुर क्रिपा पाए।
गुर ते होए पवित्र पुनीत।
गुर ते सथिर होवहि चीत।
दोहरा
जिऊं पारस के भेटते, लोहा कंचन होइ।
तिऊं ही गुर के दरस ते, अधम तरत दुंह लोइ।

इस प्रकार कवि तनसुख ने संस्कृत ग्रंथ 'हितोपदेश' को जन-भाषा में उपलब्ध कराया और गुरमति के प्रकाश में उसकी 'राजनीति ग्रंथ' के रूप में पुनर्रचना करी।

कविता

कन्या भ्रूण-हत्या

इस धरा पे संस्कृति का, बीज लड़कियां।
भ्रूण में ही रोज फिर भी, मरती लड़कियां।
गर्भस्थ इक कली ने, प्रश्न मां से यह किया।
अपराध बता माता, मैंने ऐसा क्या किया?
जन्म लेने से पहले तूने, मार क्यों दिया?
आंगन में चहकती कभी, तेरी ये चिड़कियां।
इस धरा पे संस्कृति का, बीज लड़कियां।
वैदेही, द्रोपदी का त्याग, भूल न पाये।
माता गुजरी, माई भागो को, इतिहास भी गाये।
लक्ष्मीबाई, कल्पना चावला, सभी की आत्मा,
देती होंगी उस लोक में से तुझको झिड़कियां।
इस धरा पे संस्कृति का, बीज लड़कियां।
घटते नारी आंकड़ों ने कमान है कसी।
चारों ओर उड़ रही है, मां तेरी हंसी।
जननी जन्म-भूमि, स्वर्गादपि गरियसी,
खोल मन की गांठ, ज्ञान की भी खिड़कियां।
इस धरा पे संस्कृति का, बीज लड़कियां।
समाज संस्कृति की, कड़ी टूट जायेगी।
नारी छाया तक, यहां से रूठ जायेगी।
घर, समाज, राज, देश, होंगे फिर कहां?
तरसोगे देखने को भी, नारी की झलकियां!
इस धरा पे संस्कृति का, बीज लड़कियां।

-डॉ. (सुश्री) लीला मोदी, २९१, मोती स्मृति, टिपटा, कोटा (राजस्थान)-३२४००६

ख़बरनामा

विद्वानों द्वारा सिक्ख इतिहास में पुन: खोज की आवश्यकता पर बल दिया गया

चंडीगढ़ : १२ अक्तूबर। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा संचालित 'सिक्ख स्रोत, ऐतिहासिक ग्रंथ संपादना प्रोजेक्ट' द्वारा कलगीधर निवास में आयोजित की जाती 'लेक्चर-लड़ी' की शृंखला में इस बार 'सिक्ख इतिहास में पुन: खोज की आवश्यकता' विषय पर लेक्चर-समारोह हुआ। समारोह में उपस्थित सभी विद्वानों ने एकमत होकर सिक्ख इतिहास में पुन: खोज किए जाने के बाद सर्वप्रवानित 'सिक्ख इतिहास' तैयार किये जाने पर बल दिया।

मुख्य वक्ता डॉ. करम सिंघ राजू ने अपने भाषण में विस्तारपूर्वक बताया कि अब तक सिक्ख इतिहास को विभिन्न भाषाओं में विभिन्न इतिहासकारों द्वारा लिखा गया है। सभी इतिहासकारों की सीमा तथा क्षमता अलग-अलग होने के कारण उनके द्वारा लिखित सिक्ख इतिहास में कई तरह की भ्रांतियां तथा विभिन्नताएं पाई जाती हैं। कहीं पर तिथियों की विभिन्नताएं हैं तथा कहीं पर स्थल आदि को लेकर भ्रांति है। उन्होंने कहा कि आजकल के खोज विद्यार्थी सिक्ख इतिहास की प्रमाणिकता को लेकर अक्सर ही भ्रमित हो जाते हैं तथा उन्हें खोज-कार्यों में कई तरह की मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। डॉ. करम सिंघ राजू ने इस बात पर जोर देकर कहा कि यदि शिरोमणि गु: प्र: कमेटी सिक्ख इतिहास पर पुन: खोज करवा कर पुस्तक प्रकाशित करवाए तो उसे 'प्रमाणित सिक्ख इतिहास' मानकर शोध-छात्र इससे नि:संकोच लाभ प्राप्त कर सकेंगे।

संपादना प्रोजेक्ट के निर्देशक डॉ. किरपाल सिंघ ने अपने भाषण में कहा है कि इतिहास साइंस भी है और कला भी। हमें इतिहास को साइंस की तरह ठोस पैमानों पर परख कर तथा कला की भांति श्रद्धा-भावना से सुसज्जित कर पेश किया जाना चाहिए। उन्होंने बताया कि समय के बदलने के साथ-साथ इतिहास की पेशकारी तथा व्याख्या बदलती रहती है। उन्होंने बताया कि सिक्ख इतिहास में जो भी भ्रांतियां या विभिन्नताएं पाई जाती हैं अब समय आ गया है कि उनको दूर कर एक शुद्ध तथा सर्वप्रवानित सिक्ख इतिहास भावी पीढ़ी के लिए प्रस्तुत किया जाए। उन्होंने कहा कि वर्तमान समय में किसी भी सिक्ख इतिहास को पूर्णत: उचित या पूर्णत: अनुचित नहीं ठहराया जा सकता।

समारोह की अध्यक्षता करते हुए डॉ. इंदू बांगा ने कहा कि इतिहास एक ऐसा संवाद है जो कभी खत्म नहीं होता। इतिहास कभी न खत्म होने वाली प्रक्रिया है जो कि चलती ही रहती है। उन्होंने भी इस बात को दोहराया कि सिक्ख इतिहास में पाई जाने वाली विभिन्नताओं तथा भ्रांतियों को दूर कर सर्वप्रवानित सिक्ख इतिहास लिखने के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी यदि इस महान कार्य को अपने हाथों में लेकर सम्पूर्ण करती है तो तैयार सिक्ख इतिहास पर अधिकतर लोग एकमत होंगे। इस कार्य के लिए पंथ-प्रसिद्ध विद्वानों का एक पैनल बनाया जाना चाहिए। श्री अकाल तख्त साहिब

के पूर्व जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी जोगिंदर सिंघ ने कहा कि सिक्ख इतिहास पर पुन: खोज करते समय गुरबाणी को मुख्य आधार के रूप में सामने रखा जाना चाहिए। लेक्चर लड़ी में विशेष रूप से उपस्थित पंजाब यूनीवर्सिटी के सिक्ख धर्म अध्ययन विभाग की चेयरपरसन डॉ. जसपाल कौर एवं पंथ-रत्न जत्थेदार गुरचरण सिंघ टौहड़ा इंस्टीट्यूट की निर्देशक डॉ. राजिंदरजीत कौर ने भी सम्बोधित किया। कार्यक्रम का संचालन प्रोजेक्ट प्रभारी स. चमकौर सिंघ द्वारा किया गया। कार्यक्रम में उपस्थित विद्वानों, शोध-छात्रों एवं छात्राओं तथा अन्य श्रोतागण का बीबी बलजीत कौर रीसर्च स्कालर द्वारा विशेष रूप से धन्यवाद किया गया।

धार्मिक परीक्षा नवंबर २०११ की समय-सारिणी जारी

श्री अमृतसर : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा पूरे भारत के स्कूलों, कालेजों में रेगुलर पढ़ रहे विद्यार्थियों को गुरबाणी, सिक्ख इतिहास तथा सिक्ख रहित मर्यादा की प्रारंभिक जानकारी हासिल कराने हेतु प्रत्येक वर्ष नवंबर माह में ली जाने वाली धार्मिक परीक्षा इस वर्ष १६-१७ नवंबर, २०११ को ली जाएगी।

इस बारे में जानकारी देते हुए धर्म प्रचार कमेटी के अतिरिक्त सचिव स. सतबीर सिंघ ने बताया कि पहले धार्मिक परीक्षा में तीन पेपर लिए जाते थे मगर इस वर्ष से सिलेबल में परिवर्तन कर दिया गया है जिसके अनुसार अब केवल दो ही पेपर लिए जाया करेंगे। उन्होंने बताया कि १६ नवंबर, २०११, दिन बुधवार को पहला पेपर 'गुरबाणी तथा गुरु-इतिहास' का होगा। १७ नवंबर, २०११, दिन वृहस्पतिवार को दूसरा पेपर 'सिक्ख इतिहास तथा सिक्ख रहित मर्यादा' से सम्बंधित होगा। परीक्षा का समय सुबह १० बजे से १ बजे तक का होगा। उन्होंने कहा कि परीक्षा सम्बंधी सारी तैयारियां पूरी कर ली गई हैं तथा विद्यार्थियों को उनके स्कूल-कालेज के नाम पर उनके रोल नंबर तथा परीक्षा-केंद्र सम्बंधी जानकारी भेज दी गई है।

स. सतबीर सिंघ ने धार्मिक परीक्षा में भाग ले रहे विद्यार्थियों के स्कूलों-कालेजों के प्रधानाचार्यों एवं प्रबंधकों से अपील की है कि वे परीक्षा से पूर्व विद्यार्थियों की तैयारी भली-भांति करवाएं ताकि विद्यार्थी इस परीक्षा के जरिए सिक्ख इतिहास तथा गुरमति की अधिक से अधिक जानकारी से परिचित हो सकें। उन्होंने बताया कि विद्यार्थियों को और अधिक उत्साहित करने के लिए लगभग २३ लाख के वजीफे भी दिए जाते हैं जो कि मैरिट सूची में आने वाले विद्यार्थियों को प्रदान किए जाते हैं। उन्होंने कहा कि यदि उचित समय पर किसी स्कूल-कालेज में विद्यार्थियों के रोल नंबर तथा परीक्षा-केंद्र सम्बंधी जानकारी नहीं पहुंचती है तो वे 0183-2553956, 57, 58, 59, एक्स. 305 पर सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। 

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-११-२०११